॥ ऋषि प्रसाद ॥

वर्ष : १४ अंक : १३१
नवम्बर २००३ मूल्य : रु. ६-००
कार्तिक-मार्गशीर्ष, वि.सं.२०६०

सदस्यता शुल्क

भारत में
(१) वार्षिक : रु. ५५/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक: रु. २००/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में
(१) वार्षिक : रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक: रु. ३००/-
(४) आजीवन : रु. ७५०/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक: US $ 80
(४) आजीवन : US $ 200

कार्यालय '**ऋषि प्रसाद**' श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०-११.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site: www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : कौशिक वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-३८०००५.
मुद्रण स्थल : हार्दिक वेबप्रिंट, राणीप और विनय प्रिंटिंग प्रेस, अमदावाद।
सम्पादक : कौशिक वाणी
सहसम्पादक : प्रे. खो. मकवाणा

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'संत आसाराम वाणी' सोमवार से शुक्रवार सुबह ७-३० से ८-०० व शनिवार और रविवार सुबह ७-०० से ७-३० **संस्कार चैनल** पर 'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २-०० से २-३० तथा रात्रि १०-०० से १०-३० **साधना चैनल** पर 'संत श्री आसारामजी बापू की सत्संग-सरिता' रोज रात्रि ९-०० से ९-३०.

मतिमान वही है...

जिससे कोई भी भूल न हो, भगवान वही है ।
भूल हो भूल का भान न हो, हैवान वही है ।
भूलों के रहते चित्त में, जिसके चैन नहीं आये ।
अपना सुधार करता जाये, इंसान वही है ॥
आसुरी प्रकृति वह, जहाँ भूल का दुःख नहीं होता ।
जो भूल देखने दे न कहीं, अभिमान वही है ॥
जो हानि देखनी पड़ती, वह सब भेंट भूल की है ।
जो भूल करे वह भोगे, प्रकृति का विधान वही है ।
यह सारी भूल भोग-सुख की, तृष्णावश ही होती है ।
बस 'पथिक' जो कि तृष्णा तज दे, मतिमान वही है ।

✻

गीता-सार

है सार गीता का यही, सब धर्म तजना चाहिये ।
मन कर्म वाणी से सदा, धर्मेश भजना चाहिये ॥
करने न करने में कभी, नाहीं उलझना चाहिये ।
कर्ता अकर्ता कौन है, सम्यक् समझना चाहिये ॥
मन शुद्ध दाता मोक्ष का, विपरीत मन बन्धन करे ।
जो धार करले शुद्ध मन, भव सिन्धु से निश्चय तरे ॥
मन शुद्ध करने के लिए, निज धर्म करना चाहिये ।
जिसके लिये जो है विदित, सो कर्म करना चाहिये ॥
ना शोक करना चाहिये, ना मोह करना चाहिये ।
जब एक अपना आप है, क्यों व्यर्थ डरना चाहिये ॥
भोला ! शरण ले ईश की, भव सिन्धु तरना चाहिये ।
जन्मा मरा अब तक घना, अब तो न मरना चाहिये ॥

- भोले बाबा

✻
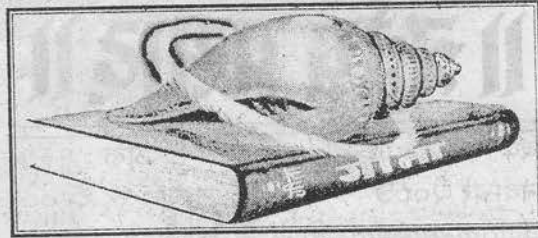
गीता-महिमा

गीता विवेकरूपी वृक्षों का एक अपूर्व बगीचा है । यह सब सुखों की नींव है । सिद्धांत-रत्नों का भंडार है । नवरसरूपी अमृत से भरा हुआ समुद्र है । खुला हुआ परम धाम है और सब विद्याओं की मूल भूमि है । **– संत ज्ञानेश्वर**

गीता हमारे धर्मग्रंथों में एक अत्यंत तेजस्वी और निर्मल हीरा है ।

– लोकमान्य तिलक

गीता विश्व धर्म की एक पुस्तक है । वह हमारे लिए सद्‌गुरुरूप है, मातारूप है । **– महात्मा गाँधी**

गीता को धर्म का सर्वोत्तम ग्रंथ मानने का यही कारण है कि उसमें ज्ञान, कर्म और भक्ति - तीनों योगों की न्याययुक्त व्याख्या है, अन्य किसी भी ग्रंथ से इसका सामंजस्य नहीं है ।

– बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

गीता जबानी जमा-खर्च का शास्त्र नहीं, किंतु आचरण शास्त्र है ।

– विनोबाजी

गीता के आधार पर अकेला मनुष्य सारी दुनिया का मुकाबला कर सकता है ।

– विनोबाजी

किसी भी जाति को उन्नति के शिखर पर चढ़ाने के लिए गीता का उपदेश अद्वितीय है ।

– वारेन हेस्टिंग्ज

गीता उपनिषदों से चयन किये हुए आध्यात्मिक सत्य के सुंदर पुष्पों का गुच्छा है ।

– स्वामी विवेकानंद

इससे (गीता से) मनुष्यमात्र अपनी पूर्णता तथा सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मिक उन्नति को प्राप्त कर सकता है । **– श्री अरविंद**

✻

सभीको दीपावली की खूब-खूब शुभकामनाएँ...

सदैव प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है। 'ऋग्वेद' में आता है :

विश्वाहा वयं सुमनस्यमानाः।

हम सदा ही अपने को प्रसन्न रखें।

'श्रीमद्भगवद्गीता' में आता है :

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते॥

'अंतःकरण की प्रसन्नता होने पर साधक के सम्पूर्ण दुःखों का अभाव हो जाता है और उस प्रसन्न चित्तवाले कर्मयोगी की बुद्धि शीघ्र ही सब ओर से हटकर एक परमात्मा में ही भलीभाँति स्थिर हो जाती है।' *(गीता : २.६५)*

दीपावली का दूसरा दिन अर्थात् नूतन वर्ष का प्रथम दिन... इस दिन जो मनुष्य हर्ष में रहता है, उसका पूरा वर्ष हर्ष में बीतता है और जो शोक में रहता है, उसका पूरा वर्ष शोक में ही व्यतीत होता है। यही बात 'महाभारत' में भी आती है। पितामह भीष्म महाराज युधिष्ठिर से कहते हैं :

यो यादृशेन भावेन तिष्ठत्यस्यां युधिष्ठिर।
हर्षदैन्यादिरूपेण तस्य वर्षं प्रयाति वै॥

'हे युधिष्ठिर ! आज (नूतन वर्ष के प्रथम दिन) व्यक्ति हर्ष, दीनता आदि जिस भाव में रहता है, उसी भाव में उसका सम्पूर्ण वर्ष जाता है।'

खुशी जैसी खुराक नहीं और चिंता जैसा गम नहीं। सभी रोगों पर हास्य का औषधि की नाईं उत्तम प्रभाव पड़ता है। हरिनाम, रामनाम, ओंकार आदि के उच्चारण से बहुत सारी बीमारियाँ मिटती हैं और रोग-प्रतिकारक शक्ति बढ़ती है। हास्य के साथ भगवन्नाम का उच्चारण एवं भगवद्भाव करने से विकार क्षीण होते हैं, चित्त का प्रसाद बढ़ता है एवं योग्यताओं का विकास होता है।

असली हास्य से तो बहुत सारे लाभ होते ही हैं किंतु बनावटी हास्य से भी फेफड़ों का बढ़िया व्यायाम हो जाता है। श्वास लेने की क्षमता बढ़ जाती है, रक्त-संचार तेजी से होने लगता है और शरीर में लाभकारी परिवर्तन होने लगते हैं।

एक होता है लाफिंग क्लबवाला असुर-दानव हास्य, जो हू-हू... हा-हा... करके किया जाता है। दूसरा होता है देव-मानव हास्य, जिसमें पहले तालियाँ बजाते हुए भगवन्नाम के जल्दी-जल्दी उच्चारण के द्वारा भगवद्भाव को उभारा जाता है, फिर दोनों भुजाओं को ऊपर उठाकर भगवत्समर्पण के भाव के साथ हास्य किया जाता है।

असुर-दानव हास्य से शारीरिक लाभ होते हैं किंतु देव-मानव हास्य से शारीरिक लाभ के साथ-साथ आध्यात्मिक लाभ भी होते हैं। असुर-दानव हास्य में कुछ खतरे हैं, देव-मानव हास्य में कोई खतरा नहीं है। देव-मानव हास्य से रक्त का कण-कण पवित्र होता है, यकृत, गुर्दे एवं गर्भाशय को फायदा होता है तथा पाँचों ज्ञानेन्द्रियों पर सात्त्विक असर पड़ता है।

दिल का दौरा, दिल के अन्य रोग, हृदय की धमनी का रोग, आधासीसी, मानसिक तनाव, सिरदर्द, नींद में खर्राटे लेना, अम्लपित्त, अवसाद (डिप्रेशन), रक्तचाप (ब्लड प्रेशर), सर्दी-जुकाम, कैंसर आदि अनेक रोगों में हास्य से बहुत लाभ होता है।

हास्य दर्द को कम करके गठिया जैसे वातरोगों तथा एलर्जी आदि से भी मुक्ति दिलाता है। जो नजला, सर्दी, जुकाम तथा दमे से बचना चाहते हैं वे तनाव से बचें, जी भरकर हँसें। हँसने से इन रोगों से बचने में मदद मिलती है।

दिन की शुरुआत में १०-१५ मिनट तक हँसने से आप दिनभर तरोताजा एवं ऊर्जा से भरपूर रहते हैं। हास्य आपका आत्मविश्वास बढ़ाता है।

खूब हँसो, भाई ! खूब हँसो,
रोते हो क्यों इस विध प्यारे ?
होना है सो होना है।
सब सूत्र प्रभु के हाथों में,
नाहक करनी का बोझ उठाना है॥

प्रसन्नता स्वास्थ्य के लिए अमृत है, तन-मन के रोगों के लिए एक सस्ता और प्रभावकारी उपचार है। प्रसन्न व्यक्ति के पास रोग और शोक टिक नहीं सकते। प्रसन्नता जीवन में खुशहाली लाती है। वह निराश मन के लिए आशा की किरण, परेशान तथा मानसिक तनावग्रस्त लोगों के लिए सर्वोत्तम प्राकृतिक औषधि है। बड़े-से-बड़े संकटों में मुस्कराते हुए संघर्ष कीजिये, समस्याएँ व मुसीबतें आधी रह जायेंगी। बीमार व्यक्ति से मिलने जायें तो नकली मुँह मत बनाइये बल्कि उसकी मुस्कराहट उभारिये, उसे प्रसन्नता बख्शिये। गमगीन चेहरा बनाकर उसे पटाने के बजाय सूझबूझ और मुस्कराहट से उसका हित कीजिये। होठों की हलकी-सी मुस्कराहट और निर्दोष प्रेमपूर्ण, सहानुभूति भरे शब्द किसीको इतना सुख दे सकते हैं, जितना कि हजारों रुपया खर्च करने पर भी नहीं मिल सकता।

प्रसन्नता सभीको पसंद है। मुस्कराता चेहरा आनंददायी होता है। हँसता हुआ व्यक्ति स्वयं को तथा अपने संपर्क में आनेवालों को भी लाभ पहुँचाता है। हँसना एक मानवीय लक्षण है। हँसने से मस्तिष्क से लेकर सम्पूर्ण नाड़ीमंडल आंदोलित, आनंदित हो उठता है और फेफड़ों की अशुद्ध वायु शरीर से बाहर निकल जाती है। विभिन्न मांसपेशियाँ समुचित रूप से सक्रिय हो जाती हैं। निःसंदेह मनुष्य की बहुत-सी बीमारियों एवं जटिलताओं के लिए हास्य एक अचूक दवा है, एक उत्कृष्ट रसायन है। हँसमुख व्यक्ति अपेक्षाकृत अधिक समय तक जीवित रहता है।

जो लोग भोजन करने से पहले दिल खोलकर खूब हँस लेते हैं तथा प्रसन्न एवं शांत भाव से भोजन करते हैं, उन्हें भोजन से संतुष्टि, स्वाद और पोषक तत्त्व अधिक मात्रा में मिलते हैं। इस प्रकार से किया हुआ भोजन शीघ्रता से पचता है। इसके विपरीत, जो लोग भोजन करते समय चिंतित, दुःखी और कुंठित रहते हैं, उनकी आधी भूख मर जाती है, भोजन निःस्वाद हो जाता है और पाचनक्रिया पर दुष्प्रभाव पड़ता है।

तनाव के क्षणों में भी महात्मा गाँधी मजाक करने से बाज नहीं आते थे। उनका कहना था : 'मुझमें विनोद की वृत्ति न होती तो मैंने कभी का आत्मघात कर लिया होता।'

अपने को न भानेवाली किसीकी बुरी बात हँसी में टाली जा सकती है। इसी प्रकार अपना आपसी मनमुटाव भी तत्काल हँसकर मिटाया जा सकता है। मन का सारा बोझ तो हँसी क्षणमात्र में मिटा देती है।

गाँधीजी ने कहा है : 'मुझमें अगर विनोद की वृत्ति न होती तो रोज-रोज अनेक दिशाओं से मुझ पर जो हमले होते हैं, उन्होंने मुझे कभी का खत्म कर दिया होता। लेकिन ईश्वर में मेरी जीती-जागती श्रद्धा है। जब तक वह मुझे रास्ता बता रहा है, तब तक दूसरे मेरे बारे में क्या कहते हैं इसकी मुझे बिल्कुल परवाह नहीं है। उनकी टीकाओं को मैं हँसकर उड़ा देता हूँ और जो लोग मुझ पर हँसते हैं, उन पर भी मैं हँस सकता हूँ।'

विश्वविद्यालय स्टेनफोर्ड मेडिकल कॉलेज के मनोविज्ञान विभाग के डॉ. विलियम फाय का कहना है कि 'हँसी के बिना जीवन ही नहीं है। यदि रोगी व्यक्ति हँसता नहीं है तो प्रायः अधिक समय तक रोगग्रस्त बना रहता है। हास्य शरीर को झकझोर देता है, जिससे शरीर में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानेवाली अंतस्रावी ग्रंथी प्रणाली सुचारु रूप से कार्य करने लगती है।'

लंदन के मनोविज्ञान विशेषज्ञ डॉ. जॉन गोमेज का कथन है : 'मानसिक तनाव से थकान, व्यग्रता, चिड़चिड़ापन और अनिद्रा की शिकायत हो जाती है। इसीसे सिरदर्द, कमरदर्द, अल्सर और बदहजमी भी हो जाती है। तनाव को दूर करने के लिए औषधि खाने से बेहतर है कि समस्या को समझा जाय और इसके समाधान के बारे में शांतिपूर्वक विचार किया जाय। इस अवस्था में तीन मिनट का विनोद और हँसी की सभा आपकी परेशानी को दूर कर देगी।'

लॉस एंजेल्स के एक अस्पताल में जब रोगी को छुट्टी दी जाती है तो उसे यह निर्देश दिया जाता है कि वह दिन में कम-से-कम १५ मिनट अवश्य हँसे।

कैलिफोर्निया के एक वृद्धघर में हास्य को नियमित रूप से औषधि के रूप में देने के लिए हास्य-विषयक पुस्तकें व कविताएँ पढ़ायी जाती हैं तथा हास्य-विषयक चलचित्र व कार्टून दिखाये जाते हैं।

स्पार्टा के प्रसिद्ध नेता साइकरगल का स्पष्ट मत था कि 'हास्य में हमारी पाचनशक्ति को बढ़ाने का अपूर्व गुण होता है।' इसलिए उसने अपने भोजनालय में हास्य देवता की एक सुंदर मूर्ति स्थापित कर रखी थी।

प्रसन्नता स्वास्थ्य है, उदासी रोग है। जर्मनी के प्रसिद्ध नाटककार शेक्सपियर के अनुसार, 'प्रसन्नचित्त व्यक्ति अधिक समय तक जीते हैं।'

प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचंद ने कहा है : 'मन की प्रसन्नता ही व्यवहार में उदारता बन जाती है।'

हास्य या उल्लास प्राकृतिक औषधियों का अथाह समुद्र है। हास्य-विनोद के द्वारा शारीरिक दुर्बलताओं से बचा जा सकता है। आप हँसी से पुष्ट बनोगे। प्रसन्नचित्त व्यक्ति अपने सम्पर्क में आनेवालों को आनंद बाँटता है तथा लम्बे समय तक जीता है। इसके विपरीत दुःखी, चिंतातुर व उदास रहनेवाला स्वयं की आयु तो घटा ही देता है साथ में दूसरों को भी यही बाँटता है। वह ऐसा मायूस लगता है, जैसे कोई मौत की खबर लाया हो। मनुष्य की आत्मसंतुष्टि, शारीरिक स्वास्थ्य और वृद्धि को नापने का एक ही थर्मामीटर है - चेहरे पर खिली प्रसन्नता।

हँसी जीवन का प्रभात है, यह शीतकाल की मधुर धूप है तो ग्रीष्म की तपती दोपहर में सघन छाया। मुस्कराहट एक क्षण में उत्पन्न होती है, पर उसकी मधुर स्मृति कभी-कभी तो सदा के लिए मस्तिष्क पर अंकित हो जाती है। संसार में शोकाकुल को तिनके का सहारा यदि कोई है तो वह है प्रसन्नता।

हँसी या मुस्कराहट पर हमें कुछ खर्च नहीं करना पड़ता परंतु यह बहुत कुछ दे देती है। इसे पानेवाला मालामाल हो जाता है और देनेवाले की जेब से कुछ खर्च भी नहीं होता।

प्राणिमात्र के परम हितैषी ब्रह्मनिष्ठ लोकसंत श्री आसारामजी बापू अपने सत्संग-प्रवचनों तथा ध्यान योग शिविरों में 'देव-मानव हास्य प्रयोग' कराते हैं। श्रोताओं को वे इसकी विधि भी समझाते हैं और प्रत्यक्ष रूप से अभ्यास भी कराते हैं। इस प्रयोग से क्या लाभ होते हैं तथा घर में इसे कब, कहाँ और कैसे करना है यह भी बताते हैं। जिन्होंने भी 'देव-मानव हास्य प्रयोग' का लाभ लिया है, वे इसकी महिमा गाते नहीं थकते।

सौ रोगों की एक दवाई, हँसना सीखो मेरे भाई...

हँसना मनुष्य की स्वाभाविक क्रिया है। यह एक सस्ती दवा है। हँसना मानव-जीवन का उज्ज्वल पहलू है। मुस्कान प्रेम की भाषा है।

पूज्य बापूजी के शब्दों में :

मुस्कराकर गम का जहर जिसको पीना आ गया।
यह हकीकत है कि जहाँ में उसको जीना आ गया॥

जो अति दुःखी रहते हैं, जिनके लिए हँसना कठिन है, उनके लिए पूज्य बापूजी ने कहा है : ''नाक से १२ से १५ खूब गहरे श्वास लें और मुँह से छोड़ें। श्वास लेते समय 'राम' व छोड़ते समय 'कृष्ण' की भावना करें तो विशेष लाभ होगा और प्रेमावतार, प्रसन्नतादाता की कृपा का अनुभव सहज में ही होगा। उदास चेहरेवाला भी हँसमुख बन जायेगा।''

पूज्य बापूजी द्वारा प्रदत्त यह प्रयोग मानव-जाति के लिए आशीर्वाद रूप है। बापूजी कहते हैं : ''इस प्रयोग से प्रसन्नता, खुशी तुम्हारे अपने घर की खेती हो जायेगी। आपका क्या ख्याल है ?

मियाँ रोते क्यों हो ?

भाईजान ! शक्ल ही ऐसी है।

अरे ! फिक्र फेंक कुएँ में, जो होगा देखा जायेगा।

जहाजों को डुबा दे, उसे तूफान कहते हैं।
तूफानों से जो टक्कर ले, उसे इंसान कहते हैं॥

स्वर्ग का फरिश्ता भी मिले और तुम्हारी मुस्कान पर रोक लगाता हो तो उसको भी ठुकरा दो।''

प्रसन्नतादायक मंत्र

ॐ क्रां क्रीं ह्रां ह्रीं उसभमाजियं च वंदे
संभवमभिनंदणं च, सुमई च पउमप्पहं,
सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे स्वाहा।

विधि : किसी भी माह के शुक्लपक्ष में सोमवार से इस मंत्र का जप प्रारंभ करें। पूर्वाभिमुख होकर पद्मासन में बैठकर रोज एक माला करें। सफेद वस्त्र, सफेद आसन, सफेद माला (स्फटिक) का प्रयोग करें। सफेद पदार्थों का ही भोजन करें। ७ दिन तक मौन रखकर एकाग्रतापूर्वक जप करें।

दसवें अध्याय का माहात्म्य

भगवान शिव कहते हैं : सुंदरि ! अब तुम दशम अध्याय के माहात्म्य की परम पावन कथा सुनो, जो स्वर्गरूपी दुर्ग में जाने के लिए सुंदर सोपान और प्रभाव की चरम सीमा है। काशीपुरी में धीरबुद्धि नाम से विख्यात एक ब्राह्मण था, जो मुझमें प्रिय नंदी के समान भक्ति रखता था। वह पावन कीर्ति के अर्जन में तत्पर रहनेवाला, शांतचित्त और हिंसा, कठोरता तथा दुःसाहस से दूर रहनेवाला था। जितेन्द्रिय होने के कारण वह निवृत्तिमार्ग में ही स्थित रहता था। उसने वेदरूपी समुद्र का पार पा लिया था। वह सम्पूर्ण शास्त्रों के तात्पर्य का ज्ञाता था। उसका चित्त सदा मेरे ध्यान में संलग्न रहता था। वह मन को अंतरात्मा में लगाकर सदा आत्मतत्त्व का साक्षात्कार किया करता था; अतः जब वह चलने लगता, तब मैं प्रेमवश उसके पीछे दौड़-दौड़कर उसे हाथ का सहारा देता रहता था।

यह देख मेरे पार्षद भृंगिरिटि ने पूछा : भगवन् ! इस प्रकार भला, किसने आपके दर्शन किये होंगे ? इस महात्मा ने कौन-सा तप, होम अथवा जप किया है कि स्वयं आप ही पग-पग पर इसे हाथ का सहारा देते चलते हैं ?

भृंगिरिटि का यह प्रश्न सुनकर मैंने इस प्रकार उत्तर देना आरम्भ किया। 'एक समय की बात है - कैलास पर्वत के पार्श्वभाग में पुन्नाग वन के भीतर चंद्रमा की अमृतमयी किरणों से धुली हुई भूमि में एक वेदी का आश्रय लेकर मैं बैठा हुआ था। मेरे बैठने के क्षणभर बाद ही सहसा बड़ी जोर से आँधी उठी, वहाँ के वृक्षों की शाखाएँ नीचे-ऊपर होकर आपस में टकराने लगीं, कितनी ही टहनियाँ टूट-टूटकर बिखर गयीं। पर्वत की अविचल छाया भी हिलने लगी। इसके बाद वहाँ भयंकर शब्द हुआ, जिससे पर्वत की कंदराएँ प्रतिध्वनित हो उठीं। तदनंतर आकाश से कोई विशाल पक्षी उतरा, जिसकी कांति काले मेघ के समान थी। वह कज्जल की राशि, अंधकार के समूह अथवा पंख कटे हुए काले पर्वत-सा जान पड़ता था। पैरों से पृथ्वी का सहारा लेकर उस पक्षी ने मुझे प्रणाम किया और एक सुंदर नवीन कमल मेरे चरणों में रखकर स्पष्ट वाणी में स्तुति करनी आरम्भ की।

पक्षी बोला : देव ! आपकी जय हो। आप चिदानंदमयी सुधा के सागर तथा जगत के पालक हैं। सदा सद्भावना से युक्त और अनासक्ति की लहरों से उल्लसित हैं। आपके वैभव का कहीं अंत नहीं है। आपकी जय हो। अद्वैतवासना से परिपूर्ण बुद्धि के द्वारा आप त्रिविध मलों से रहित हैं। आप जितेन्द्रिय भक्तों के अधीन रहते हैं तथा ध्यान में आपके स्वरूप का साक्षात्कार होता है। आप अविद्यामय उपाधि से रहित, नित्यमुक्त, निराकार, निरामय, असीम, अहंकारशून्य, आवरणरहित और निर्गुण हैं। आपके चरणकमल शरणागत भक्तों की रक्षा करने में प्रवीण हैं। अपने ललाटरूपी भयंकर महासर्प की विषज्वाला से आपने कामदेव को भस्म किया है। आपकी जय हो। आप प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से दूर होते हुए भी प्रामाण्यस्वरूप हैं। आपको बार-बार नमस्कार है। चैतन्य के स्वामी तथा त्रिभुवनरूपधारी आपको प्रणाम है। मैं श्रेष्ठ योगियों द्वारा चुम्बित आपके उन चरण-कमलों की वंदना करता हूँ, जो अपार भव-पाप के समुद्र से पार उतारने में अद्भुत शक्तिशाली हैं। महादेव ! साक्षात् बृहस्पति भी आपकी स्तुति करने की धृष्टता नहीं कर सकते। सहस्र मुखोंवाले नागराज शेष में भी इतना चातुर्य नहीं है कि वे आपके गुणों का वर्णन कर सकें, फिर मेरे जैसे छोटी बुद्धिवाले पक्षी की

तो बिसात ही क्या है ?

उस पक्षी द्वारा किये हुए इस स्तोत्र-पाठ को सुनकर मैंने उससे पूछा : 'विहंगम ! तुम कौन हो और कहाँ से आये हो ? तुम्हारी आकृति तो हंस जैसी है, मगर रंग कौए का मिला है । तुम जिस प्रयोजन को लेकर यहाँ आये हो, उसे बताओ ।'

पक्षी बोला : देवेश ! मुझे ब्रह्माजी का हंस जानिये । धूर्जटे ! जिस कर्म से मेरे शरीर में इस समय कालिमा आ गयी है, उसे सुनिये । प्रभो ! यद्यपि आप सर्वज्ञ हैं, अतः आपसे कोई भी बात छिपी नहीं है तथापि यदि आप पूछते हैं तो बतलाता हूँ। सौराष्ट्र (सूरत) नगर के पास एक सुंदर सरोवर है, जिसमें कमल लहलहाते रहते हैं । उसीमें से बालचंद्रमा के टुकड़े जैसे श्वेत मृणालों के ग्रास लेकर मैं बड़ी तीव्र गति से आकाश में उड़ रहा था । उड़ते-उड़ते सहसा वहाँ से पृथ्वी पर गिर पड़ा। जब होश में आया और अपने गिरने का कोई कारण न देख सका तो मन-ही-मन सोचने लगा : 'अहो ! यह मुझ पर क्या आ पड़ा ? आज मेरा पतन कैसे हो गया ? पके हुए कपूर के समान मेरे श्वेत शरीर में यह कालिमा कैसे आ गयी ?' इस प्रकार विस्मित होकर मैं अभी विचार ही कर रहा था कि उस पोखरे के कमलों में से मुझे ऐसी वाणी सुनायी दी : 'हंस ! उठो, मैं तुम्हारे गिरने और काले होने का कारण बताती हूँ।' तब मैं उठकर सरोवर के बीच में गया और वहाँ पाँच कमलों से युक्त एक सुंदर कमलिनी को देखा। उसको प्रणाम करके मैंने प्रदक्षिणा की और अपने पतन का सारा कारण पूछा ।

कमलिनी बोली : कलहंस ! तुम आकाशमार्ग से मुझे लाँघकर गये हो, उसी पातक के परिणामवश तुम्हें पृथ्वी पर गिरना पड़ा है तथा उसीके कारण तुम्हारे शरीर में कालिमा दिखाई देती है। तुम्हें गिरा देख मेरे हृदय में दया भर आयी और जब मैं इस मध्यम कमल के द्वारा बोलने लगी हूँ, उस समय मेरे मुख से निकली हुई सुगंध को सूँघकर साठ हजार भँवरे स्वर्गलोक को प्राप्त हो गये हैं। पक्षिराज ! जिस कारण मुझमें इतना वैभव - ऐसा प्रभाव आया है, उसे बतलाती हूँ, सुनो । इस जन्म से पहले तीसरे जन्म में मैं इस पृथ्वी पर एक ब्राह्मण की कन्या के रूप में उत्पन्न हुई थी । उस समय मेरा नाम सरोजवदना था । मैं गुरुजनों की सेवा करते हुए सदा एकमात्र पतिव्रत के पालन में तत्पर रहती थी। एक दिन की बात है, मैं एक मैना को पढ़ा रही थी । इससे पतिसेवा में कुछ विलम्ब हो गया और पतिदेवता कुपित हो गये । उन्होंने मुझे शाप दिया : 'पापिनी ! तू मैना हो जा।' मरने के बाद यद्यपि मैं मैना ही हुई, तथापि पातिव्रत्य के प्रसाद से मुनियों के ही घर में मुझे आश्रय मिला । किसी मुनिकन्या ने मेरा पालन-पोषण किया । मैं जिनके घर में थी, वे ब्राह्मण प्रतिदिन प्रातःकाल विभूतियोग नाम से प्रसिद्ध गीता के दसवें अध्याय का पाठ करते थे और मैं उस पापहारी अध्याय को सुना करती थी। विहंगम ! काल आने पर मैं मैना का शरीर छोड़कर दशम अध्याय के माहात्म्य से स्वर्गलोक में अप्सरा हुई । मेरा नाम पद्मावती हुआ और मैं पद्मा की प्यारी सखी हो गयी।

एक दिन मैं विमान से आकाश में विचर रही थी । उस समय सुंदर कमलों से सुशोभित इस रमणीय सरोवर पर मेरी दृष्टि पड़ी और इसमें उतरकर ज्यों ही मैंने जलक्रीड़ा आरम्भ की, त्यों ही दुर्वासा मुनि आ धमके। उन्होंने वस्त्रहीन अवस्था में मुझे देख लिया । उनके भय से मैंने स्वयं ही एक कमलिनी का रूप धारण कर लिया। मेरे दोनों पैर दो कमल हुए । दोनों हाथ भी दो कमल हो गये और शेष अंगों के साथ मेरा मुख भी एक कमल हुआ । इस प्रकार मैं पाँच कमलों से युक्त हुई। मुनिवर दुर्वासा ने मुझे देखा । उनके नेत्र क्रोधाग्नि से जल रहे थे। वे बोले : 'पापिनी ! तू इसी रूप में सौ वर्षों तक पड़ी रह।' यह शाप देकर वे क्षणभर में अंतर्धान हो गये । कमलिनी होने पर भी विभूतियोग अध्याय के माहात्म्य से मेरी वाणी लुप्त नहीं हुई है । मुझे लाँघनेमात्र के अपराध से तुम पृथ्वी पर गिरे हो। पक्षिराज ! यहाँ

खड़े हुए तुम्हारे सामने ही आज मेरे शाप की निवृत्ति हो रही है, क्योंकि आज सौ वर्ष पूरे हो गये। मेरे द्वारा गाये जाते हुए उस उत्तम अध्याय को तुम भी सुन लो। उसके श्रवणमात्र से तुम भी आज ही मुक्त हो जाओगे।

यह कहकर पद्मिनी ने स्पष्ट तथा सुंदर वाणी में दसवें अध्याय का पाठ किया और वह मुक्त हो गयी। उसे सुनने के बाद उसीके दिये हुए इस कमल को लाकर मैंने आपको अर्पण किया है।

इतनी कथा सुनाकर उस पक्षी ने अपना शरीर त्याग दिया। यह एक अद्भुत-सी घटना हुई। वही पक्षी अब दसवें अध्याय के प्रभाव से ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ है। जन्म से ही अभ्यास होने के कारण शैशवावस्था से ही इसके मुख से सदा गीता के दसवें अध्याय का उच्चारण हुआ करता है। दसवें अध्याय के अर्थ-चिन्तन का यह परिणाम हुआ है कि यह सब भूतों में स्थित शंख-चक्रधारी भगवान विष्णु का सदा ही दर्शन करता रहता है। इसकी स्नेहपूर्ण दृष्टि जब कभी किसी देहधारी के शरीर पर पड़ जाती है, तब वह चाहे शराबी और ब्रह्महत्यारा ही क्यों न हो, मुक्त हो जाता है एवं पूर्वजन्म में अभ्यास किये हुए दसवें अध्याय के माहात्म्य से इसको दुर्लभ तत्त्वज्ञान प्राप्त हुआ तथा इसने जीवन्मुक्ति भी पा ली है। अतः जब यह रास्ता चलने लगता है तो मैं इसे हाथ का सहारा दिये रहता हूँ। भृंगिरिटे ! यह सब दसवें अध्याय की ही महामहिमा है।

पार्वती ! इस प्रकार मैंने भृंगिरिटि के सामने जो पापनाशक कथा कही थी, वही यहाँ तुमसे भी कही है। नर हो या नारी, अथवा कोई भी क्यों न हो, इस दसवें अध्याय के श्रवणमात्र से उसे सब आश्रमों के पालन का फल प्राप्त होता है।

('पद्म पुराण' से)

श्रीमद्भगवद्गीता के दसवें अध्याय के कुछ श्लोक

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः।
सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः॥

जो पुरुष मेरी इस परमैश्वर्यरूप विभूति को और योगशक्ति को तत्त्व से जानता है, वह निश्चल भक्तियोग से युक्त हो जाता है - इसमें कुछ भी संशय नहीं है। (७)

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः॥

मैं वासुदेव ही सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति का कारण हूँ और मुझसे ही सब जगत चेष्टा करता है, इस प्रकार समझकर श्रद्धा और भक्ति से युक्त बुद्धिमान भक्तजन मुझ परमेश्वर को ही निरंतर भजते हैं। (८)

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥

निरंतर मुझमें मन लगानेवाले और मुझमें ही प्राणों को अर्पण करनेवाले भक्तजन मेरी भक्ति की चर्चा के द्वारा आपस में मेरे प्रभाव को जनाते हुए तथा गुण और प्रभावसहित मेरा कथन करते हुए ही निरंतर संतुष्ट होते हैं और मुझ वासुदेव में ही निरंतर रमण करते हैं। (९)

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥

उन निरंतर मेरे ध्यान आदि में लगे हुए और प्रेमपूर्वक भजनेवाले भक्तों को मैं वह तत्त्वज्ञानरूप योग देता हूँ, जिससे वे मुझको ही प्राप्त होते हैं। (१०)

तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः।
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता॥

हे अर्जुन ! उनके ऊपर अनुग्रह करने के लिए उनके अंतःकरण में स्थित हुआ मैं स्वयं ही उनके अज्ञानजनित अंधकार को प्रकाशमय तत्त्वज्ञानरूप दीपक के द्वारा नष्ट कर देता हूँ। (११)

महत्त्वपूर्ण निवेदन

सदस्यों के डाक-पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य १३३वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया नवम्बर २००३ के अंत तक अपना नया पता भेज दें।

मत करो वर्णन...

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

सुबह उठकर परमात्मा का स्मरण करो कि 'आज अगर तू नहीं उठाता तो मैं कैसे उठ सकता था ? चाहे नौकर आकर जगाये या अलार्म बजे किंतु जगानेवाला तू नहीं होता तो मैं कैसे जागता ? मैं तेरी कृपा से ही जागा हूँ। तेरी कृपा से आँखें देखती हैं, तेरी कृपा से कान सुनते हैं, तेरी कृपा से ही पैरों में गति आती है, तेरी कृपा से ही मन संकल्प-विकल्प करता है और तेरी कृपा से ही मति निर्णय करती है... तू ही तू है... प्रभु ! तेरी जय हो।'

जब भोजन करो तब भगवान को याद करो कि 'प्रभु ! तेरी कृपा से ही तो स्वाद का पता चलता है। तेरी कृपा से ही इस भोजन से रक्त बनेगा... जो बहुत जरूरी काम हैं वे तेरी कृपा से, तेरी सत्ता से ही हो रहे हैं और कम जरूरी कामों में भी तेरी सत्ता के सिवाय हमारा हाथ भी नहीं उठेगा। अर्थात् सब कार्यों में पहले तू चाहिए, सब कार्यों के मध्य में तू चाहिए और सब कार्यों के अंत में भी तू चाहिए। वाह ! तेरी लीला अपरंपार है।'

वही मनुष्य सदा सुखी रह सकता है जिसके पास ऐसी समझ है। जो मनुष्य नासमझ होकर सुखी होना चाहता है, वह सदा दुःखी रहता है। नासमझ होकर मनुष्य कभी सुखी नहीं हो सकता और वेदान्त की समझ पाकर कभी दुःखी नहीं हो सकता। वेदान्त की समझ मिलती है सत्संग से।

मेटत कठिन कुअंक भाल के... सत्संग भाग्य के कुअंकों को मिटा देता है, कुदृष्टि हटा देता है। कुदृष्टि क्या है ? सच्चिदानंद स्वरूप से ओतप्रोत जगत में हमको दुःख, आसक्ति, मुसीबतें और मौत दिख रही है यह हमारी कुदृष्टि है। आप जिस वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति को देखें, उसमें उसके भीतर छुपे हुए परमात्मा को देखें तब आपकी दृष्टि ठीक होगी।

वह परमात्मा पूजने योग्य है, प्रेम करने योग्य है, स्मरण करने योग्य है, मिलने योग्य है। वह कैसा कारीगर है, कैसा कलाकार है !

कैसा कृपालु है, कैसा प्रेरक है, कैसा हितैषी है ! कैसा कर्म का नियामक है वह परमात्मा ! हम कुछ गलत करने जाते हैं तो हमारे दिल की धड़कनें बढ़ा देता है। फिर भी यदि गलत कर देते हैं तो लानत देने में भी वह लापरवाही नहीं करता। यदि कुछ अच्छा करते हैं तो बुद्धि का विकास करने में भी देर नहीं करता, सामर्थ्य बढ़ाने में भी देर नहीं करता।

अब उसके लिए क्या कहें ? जो कुछ भी कहेंगे वह पूरा न होगा। **मत करो वर्णन हर बेअंत है...** जैसे बालमंदिरवाला विद्यार्थी पी एच.डी. की सराहना करे तो अपनी भावना से सराहना करता है, उसको पता ही नहीं कि पी एच.डी. क्या होती है ? ऐसे ही मन और बुद्धि को पता ही नहीं कि भगवान क्या होते हैं ?

नानकजी कहते हैं :

तुमरी गति मिति तुम ही जानी ॥
नानक दास सदा कुरबानी ॥

उसके विषय में जो भी बोलते हैं वह पूरा नहीं बोल पाते हैं। जो कुछ भी सोचते हैं, पूरा नहीं सोच सकते हैं। जितना सकारात्मक सोचते हैं उतना फायदा मिल जाता है, बाकी वह तो वही है। जब करने योग्य कर्म करते हैं और न करने योग्य से बचते हैं, तब उसको पाने की तड़प बढ़ती है। ईश्वर को पाने की तड़प नहीं बढ़ी तो समझ लो कि हम न करने योग्य कर्म में लगे हुए हैं और करने योग्य कर्मों के प्रति हमारी बेपरवाही है।

पाचन ठीक होता है तो भूख लगेगी। भूख

नहीं लगती है इसका मतलब है कि आपने कुपाच्य खाया है। अपनी पाचनशक्ति से अधिक या कुछ गड़बड़ीवाला खाया है। फिर शरीर टूटता है और खाते ही रहते हैं तो हो जाता है बुखार। उसमें भी संयम नहीं किया तो प्रकृति मृत्यु देकर शरीर बदल देती है कि 'ले नया शरीर, बन भैंस और खूब खा। फिर बुखार होनेवाला नहीं है।' कैसी व्यवस्था है ! और एक-दो के लिए नहीं, सब जीवों के लिए यही व्यवस्था है। कैसा सामर्थ्य है परमात्मा का !

ईश्वर-प्राप्ति की भूख जगना बड़े पुण्यों का फल है। कभी थोड़ा-सा पुण्यफल मिला, ईश्वर-प्राप्ति की भूख जगी और फिर थोड़ी वाहवाही की इच्छा हो गयी... इसीमें फिसल जाते हैं। दुनिया को सुधारने का भूत लग जाता है। **ईश्वर-प्राप्ति की तीव्र इच्छा हो तो ईश्वर-प्राप्ति अवश्य हो जाय।** यह उसका विधान है कि आपको जिस चीज की तीव्र जरूरत है, उसे आप तक अवश्य पहुँचा देगा या आपको उस चीज तक पहुँचा देगा।

एक बार हम घने जंगल में चले गये जहाँ हमारा कोई परिचित नहीं था। अगले दिन सुबह जब हमें भूख-प्यास लगी, तब जिन्हें हम जानते भी नहीं थे ऐसे दो किसान दूध-फल ले आये।

हमने कहा : ''भाई ! हम तो आपको पहचानते भी नहीं हैं।''

वे बोलें : ''अरे ! प्रभात में स्वप्न आया और यह सब दृश्य दिखा, यह पगडंडी दिखी, महापुरुष दिखे जो आप ही थे... फिर दूध-फल लाने की प्रेरणा हुई, इसलिए ले आये !''

वह कैसे प्रेरणा देता है किसान को कि उधर दूध-फल ले जाओ ! वह ऐसा भी करता है। दो दिन नहीं केवल एक रात भूखे लेट गये थे। सुबह नहा-धोकर नियम करना बाकी था, भूख लगी थी। सोचा : 'अपन कहीं नहीं जायेंगे। जिसको गरज होगी, आयेगा।' यह सोचा उसके पहले सुबह चार बजे ही उसने उन किसानों को दूध-फल ले जाने के लिए स्वप्न दे दिया !

जिसको गरज होगी आयेगा,
सृष्टिकर्ता खुद लायेगा।
ज्यों ही मन विचार वे लाये,
त्यों ही दो किसान वहाँ आये।
दोनों सिर पर बाँधे साफा,
खाद्य पेय लिये दोनों हाथा...

कैसी व्यवस्था है उसकी ! कितनी सूक्ष्मता से हमारा ख्याल रखता है वह ! ऐसे को मिले बिना अगर मन मान जाता है तो समझो, मन में पाप-वासना है, मन में संसार का महत्त्व घुसा है और उस परमात्मा की महिमा का पता नहीं है।

आखिर तुम जगत से क्या लेना चाहते हो ? जगत किसके साथ गया ? और लोगों को जगत ने क्या दिया ? परेशानी, तनाव, बीमारी और अंत में निराशा। जीवनभर जिन डॉलरों को, तिजोरियों को सँभाला, एक नंबर, दो नंबर के पैसे देश-परदेश में रखे... क्या वे साथ जायेंगे ? दिल पर हाथ रखकर सोचो कि आप नहीं चाहो फिर भी सब कुंजियाँ किसीको देकर जाना पड़ेगा कि नहीं ? किसीको हिसाब-किताब बताना पड़ेगा कि नहीं ? पत्नी, बेटे अथवा किसीके हवाले सब माल-मिल्कियत करनी पड़ेगी कि नहीं ? आप कितना सँभालोगे ?

क्या करिये क्या जोड़िये, थोड़े जीवन काज।
छोड़ी छोड़ी सब जात हैं, देह गेह धन राज ॥

इसलिए सँभालो तो उस एक को जो सबको सँभालता है, सबका रक्षक है, परम सुहृद है, परम हितैषी है।

प्रेरणादायी सूत्र

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

समाज को श्रेयस् और प्रेयस्, आवश्यकता और प्रकाश, साहस और शक्ति देने का जिनमें सामर्थ्य है, ऐसे व्यक्ति मोक्षदाता और समाजोद्धारक होते हैं। समाज की सच्ची उन्नति और समुद्धार उन्हीं महापुरुषों के द्वारा होता है। शेष जो होते हैं वे बम बनाने की विद्या सिखाते हैं, जमीन, जर और जायदाद हथियाने की विधि बताते हैं तथा नश्वर कुर्सियों की रक्षा करने के हथकंडे बताते हैं। सद्गुरु शाश्वत आत्मपद पर बिठाने की ही सुचेष्टा में प्रवृत्त रहते हैं।

❊ हिलनेवाली, मिटनेवाली कुर्सियों के लिए छटपटाना एक सामान्य बात है, जबकि परमात्म-प्राप्ति के लिए छटपटाकर अचल आत्मदेव में स्थित होना निराली ही बात है। यह बुद्धिमानों का काम है।

❊ यह आत्मज्ञान मनुष्य-मनुष्य के बीच की दूरी मिटाता है। भय, शोक, ईर्ष्या तथा उद्वेग की आग से तपे हुए समाज को सुख, शांति, स्नेह, सहानुभूति, सदाचार, संयम, साहस, उत्साह, शौर्य और क्षमा जैसे दिव्य गुण देते हुए हृदय के अज्ञानांधकार को मिटाकर जीव को ब्रह्म बना देता है।

❊ जिस-जिस व्यक्ति, समाज और राष्ट्र ने तत्त्वज्ञान की उपेक्षा की है, तत्त्वज्ञान के विपरीत आचरण किया है उसका विनाश हुआ है, पतन हुआ है। घूसखोरी, पलायनवादिता, आतंकवाद और कायरता जैसे दुर्गुण उस समाज में फैले हैं। शास्त्रों में लिखा है :

आत्मलाभात् परं लाभं न विद्यते।

'आत्मलाभ से बढ़कर अन्य कोई लाभ नहीं है।'

❊ मंद तथा म्लान जगत को तेजस्वी और कांतिमान आत्मसंयम एवं आत्मज्ञान से ही किया जा सकता है।

खिसिआनी बिल्ली खम्भा नोचे

आज विश्व में जितनी भी समस्याएँ हैं, वे मन की रूक्षता के कारण हैं। हमारा मन बिल्कुल रूखा-सूखा हो गया है और जैसे **'खिसिआनी बिल्ली खम्भा नोचे'** बोलते हैं, ऐसे ही मनुष्य का खिसिआना मन दूसरे को नोचना चाहता है। अपनी खिसिआहट पर तो दृष्टि जाती नहीं; अपने मन का उद्वेग, अपनी रूक्षता तो मालूम नहीं पड़ती और वह दूसरों पर दोष लगाता फिरता है। जब आदमी दूसरों पर दोष लगाये तो समझ लेना कि उसके अंदर हीनता का भाव इतना प्रबल हो गया है कि वह अपने को तो कुछ समझ ही नहीं रहा है। यही समझता है कि इन्होंने हमको मार दिया, इन्होंने हमको गाली दे दी, इन्होंने हमारा अपमान कर दिया। वह स्वयं कितना छोटा हो गया है कि उसके ऊपर चोट-पर-चोट पड़ रही है। पागल आदमी पर कोई ढेला फेंक दे तो ढेला फेंकनेवाले का क्या दोष है ? खुद ही वह पागल हो गया है। शराब पीकर कोई नाली में गिर पड़े और कोई एक बाल्टी गंदा पानी और डाल दे तो शराबी जहाँ पड़ा है उसके अनुरूप ही काम किया उसने। ...तो यह तो हम देखते नहीं कि हम गंदी नाली में पड़े हैं, गंदगी पर बैठे हैं, हम अत्यंत दीन-हीन हो गये हैं, हम खिसिआने हो गये हैं - इस पर तो हमारी नजर नहीं जाती। नजर जाती है कि वह हमको टेढ़ी नजर से देख गया, वह हमको गाली दे गया, वह हमको मार गया, वह हमारा नुकसान कर गया और नारायण ! यह तो हम देखते नहीं कि हमारे आत्मा के रूप में परम शांत परब्रह्म परमेश्वर बैठा हुआ है, यह तो हम देखते नहीं कि हमारी वृत्ति में उस परमानंद का अवतरण हो गया है। इस परमानंद का विकीर्ण होता है, यह बिखरता है।

जीवन में कोई भी हो, उसको प्रेम की निगाह से देखो। यह मत देखो कि वह इस देश का है कि दूसरे देश का, इस जाति का है कि दूसरी जाति का, हमको गाली देता है कि हमारी प्रशंसा करता है। आप अपना स्वभाव मत छोड़ो। प्रेम करना आपका स्वभाव है। वह आपका स्वरूप है, वह आपका जीवन है। इसलिए आप अपने प्रेम को उन्मुक्त बिखरने दीजिये।

आत्मविजय पा लो

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

आप दृढ़ निश्चय से अपनी शक्ति को उस परम सत्य परमात्मा को पाने में लगा दो। 'लोग क्या कहेंगे ? साधना करने पर प्रभु मिलेंगे कि नहीं ? यह काम करूँगा तो होगा कि नहीं ?'... इस प्रकार के संकल्प-विकल्प न करके आज के दिन दृढ़ निश्चय करो कि 'मेरे अंदर आसुरी वृत्तिरूपी जो रावण है, उस पर विजय पाकर ही रहूँगा।' ओंकार का गुंजन कर इष्टमंत्र का जप-अनुष्ठान बढ़ाते जाओ। इस प्रकार का दृढ़ निश्चय करके यदि आप आसुरी वृत्तियों को निकालने के लिए कटिबद्ध हो गये तो आपके अंदर परमात्म-तत्त्व की ज्ञानशक्ति प्रकट होने लगेगी और यही तो परम विजय है।

किसी बाह्य शत्रु को मार डालना यह तो तुच्छ विजय है, युद्ध करके बाह्य वस्तु को प्राप्त कर लेना यह तो सामाजिक श्रेय है लेकिन सच पूछो तो... किसीके सब बाह्य शत्रु मर जायें और सारी बाह्य वस्तुएँ उसे मिल जायें, फिर भी जब तक उसने अपनी भीतरी आसुरी वृत्तियों पर विजय नहीं पायी, तब तक सदा के लिए वह विजयी नहीं माना जाता। जब वह आसुरी वृत्तियों पर विजय पाकर दैवी संपदा का स्वामी हो जाता है, तभी वास्तव में उसकी विजय मानी जाती है।

आज हम इतने बहिर्मुख हो गये हैं कि बाह्य सफलताओं को, बाह्य विजय को ही असली विजय मानने लगे हैं। धंधे-व्यापार में थोड़ी विजय मिल गयी... राज्य में थोड़ी विजय मिल गयी... यश में थोड़ी विजय मिल गयी... और हम उसीमें अपनी विजय मानकर रुक गये, किंतु भीतर मौत का भय, प्रतिकूलता का भय, विरोध का भय, बीमारी आदि का भय जारी ही रहता है।

यह सच्ची विजय नहीं है। सच्ची विजय तो यह है कि आपको जगत के लोग तो क्या, तैंतीस करोड़ देवता भी मिलकर परास्त न कर सकें - ऐसी विजय को तुम उपलब्ध हो जाओ और वह विजय है आत्मज्ञान की प्राप्ति।

लौकिक विजय वहीं होती है जहाँ पुरुषार्थ और चेतना होती है, ऐसे ही आध्यात्मिक विजय भी वहीं होती है जहाँ सूक्ष्म विचार होते हैं, चित्त की शांत दशा होती है और प्रबल पुरुषार्थ होता है।

जो आशावान, पुरुषार्थी तथा प्रसन्नहृदय है, वही पुरुष विजयी होता है।

जो निराशावादी है, खिन्नचित्त है, आलसी या प्रमादी है, वह विजय के करीब पहुँचकर भी पराजित हो जाता है, लेकिन जो उत्साही व पुरुषार्थी होता है, वह हजार बार असफल होने पर भी कदम आगे रखता है और अंततः विजयी हो जाता है। आप भी परमात्मा से मिलने की आशा को कदापि न छोड़ना, अपना उत्साह, पुरुषार्थ कभी न छोड़ना। आशा, उत्साह और पुरुषार्थ जिसके जीवन में होगा, वह अवश्य ही विजयी हो जायेगा।

जो भोगों में भटकता है, जो ऐहिक सुखों में उलझता है उसे भले दो ही बाहु नहीं, बीस बाहु हों, एक ही सिर नहीं, दस सिर हों, सोने की लंका बना सकता हो, स्वर्ग तक सीढ़ियाँ लगाने का बल रखता हो, कितना ही बलवान हो, विद्वान हो फिर भी भीतर से खोखला ही रह जाता है क्योंकि उसे भीतर का रस नहीं मिला। बाहर से भले कोई वल्कल पहना हुआ दिखे, रीछ-भालू और बंदरों की तरह सीधा-सादा जीवन यापन करता हुआ दिखे, फिर भी विजय उसीकी होती है क्योंकि वह सत्यस्वरूप आत्मसुख में स्थित होता है, इन्द्रियों का दास न रहकर इन्द्रियों का स्वामी बनता है।

जो भगवान श्रीरामचंद्रजी का अनुकरण करते

हैं, वे बाहर से सादगीपूर्ण होते हुए भी बड़ी ऊँचाइयों को छू लेते हैं और जो भाईजान रावण का अनुसरण करते हैं, वे बलवान और सत्तावान होते हुए भी विनाश को प्राप्त होते हैं। जो श्रीराम का अनुकरण करते हैं, वे आत्मारामी हो जाते हैं, आत्मतृप्त हो जाते हैं, धन्य-धन्य हो जाते हैं, मुक्तात्मा, जितात्मा हो जाते हैं। जो रावण का स्वभाव अपनाते हैं, काम को पोसते हैं, क्रोध को पोसते हैं, वे अकारण परेशान होते हैं, बेमौत मारे जाते हैं।

हजारों प्रतिकूलताओं में भी जो निराश नहीं होता, हज़ारों विरोधों में भी जो सत्य को नहीं छोड़ता, हज़ारों मुसीबतों में भी जो पुरुषार्थ को नहीं छोड़ता, वह अवश्य विजयी होता है और आपको विजयी होना ही है। लौकिक युद्ध के मैदान में तो कई विजेता हो सकते हैं लेकिन आपको तो उस युद्ध में विजयी होना है, जिसमें बड़े-बड़े योद्धा भी हार गये। आपको तो ऐसे विजयी होना है जैसे ५ वर्ष की उम्र में ध्रुव, ८ वर्ष की उम्र में रामी रामदास, शुकदेव व परीक्षित विजयी हो गये।

दुःख के प्रसंग में वे हिले नहीं और सुख के प्रसंग से प्रभावित नहीं हुए, यश के प्रसंग में वे हर्षित नहीं हुए और अपयश के प्रसंग में भी वे रुके नहीं, वरन् परमात्मा की मुलाकात के लिए अंतर्यात्रा करते ही रहे। इसीलिए लोगों ने ध्रुव, प्रह्लाद, शबरी, जनक, जाबल्य को श्रद्धा भरे हृदय से स्नेह किया, सत्कारा, नवाजा है।

उन लोगों ने समय की धारा में बहने की अपेक्षा सत्य में अपने पैर टिका दिये, परिस्थितियों की गुलामी में न बहकर परिस्थितियों को, अनुकूलता-प्रतिकूलताओं को खेलमात्र समझकर अपनी आत्मा में स्थिरता पा ली। ऐसे जो भी महापुरुष इस धरती पर हो गये हैं, उनके हाथ में सत्ता भले न रही हो, फिर भी अनेक सत्तावान उनके आगे सिर झुकाते रहे हैं। भले उनके पास धन न रहा हो, लेकिन अनेक धनवान उनसे कृपा-याचना करते रहे हैं। भले उनके पास पहलवानों जैसा बाहुबल न रहा हो, फिर भी बड़े-बड़े पहलवान उनके आगे अपना सिर झुकाकर सौभाग्य प्राप्त करते रहे हैं।

जो धर्म और नीति पर चलते हैं, हिम्मतवान हैं, उत्साही व पुरुषार्थी हैं, उन्हें परमात्मा का सहयोग मिलता रहता है। जो अनीति और अधर्म का सहारा लेता है, उसका विनाश होकर ही रहता है, फिर भले ही वह सत्तावान व धनवान क्यों न हो ? अनीति पर चलनेवाले रावण के पास बहुत धन था, सत्ता थी और बड़े-बड़े राक्षसों की विशाल सेना थी, फिर भी धर्म एवं नीति पर चलनेवाले श्रीरामजी ने छोटे-छोटे वानर-भालुओं के सहयोग से ही उस पर विजय पा ली। जब छोटे-छोटे वानर-भालू बड़े-बड़े राक्षसों को मार सकते हैं तो आप कामना व अहंकाररूपी रावण को क्यों नहीं मार सकते ? आप भी उसे अवश्य मार सकते हो, लेकिन शर्त इतनी ही है कि आपमें उत्साह और पौरुष हो तथा आप नीति व धर्म पर अडिग रहें।

भले आज संसार में दुराचार बढ़ता हुआ नजर आता है, पाप प्रभावशाली दिखता है, फिर भी आप डरना नहीं। पांडवों के पास कुछ न था, केवल उत्साह था किंतु वे सत्य और धर्म के पक्ष में थे तो विजयी हो गये। बंदरों के पास न तो सोने की लंका थी, न खाने के लिए विभिन्न पकवान थे। वे सूखे-सूखे पत्ते और फल-फूल खाकर रहते थे, फिर भी काम-क्रोध के, अहंकाररूपी रावण के अनुगामी नहीं थे, संयम व सदाचाररूपी राम के अनुगामी थे तो बड़े-बड़े राक्षसों को हराने में भी सफल हो गये।

आपको भी अधर्म और अनीति चाहे कितनी भी बलवान दिखे, फिर भी रुकना नहीं चाहिए, डरना नहीं चाहिए, निराश नहीं होना चाहिए। संगठित होकर बुद्धि और बलपूर्वक उससे लोहा लेना चाहिए। यदि ऐसा कर सके तो आपकी विजय निश्चित है। आपके शत्रु में बीस भुजाओं जितना बल हो, दस सिर जितनी समझ हो फिर भी यदि आप श्रीराम से जुड़ते हो तो आपकी विजय निश्चित है। अपनी पाँच ज्ञानेन्द्रियों तथा चार अंतःकरणों को उस रोम-रोम में रमनेवाले श्रीराम-तत्त्व में लीन करके अज्ञान, अहंकार और कामरूपी रावण पर विजय प्राप्त कर लें।

परम पूज्य बापूजी के साथ प्रश्नोत्तर

सिद्धपुर (गुज.) में १७-११-२००२ से २४-११-२००२ तक आयोजित 'विशेष ध्यान योग साधना शिविर' में पूज्यश्री द्वारा साधकों को उनके शंका-समाधान में जो प्रत्युत्तर दिये गये, उन्हींके कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं :

एक साधक : यह अनुभववाली बात है कि गृहस्थी में झूठ के बिना चल ही नहीं पाता।

पूज्य बापूजी : तुम्हारा अनुभव सर्वोपरि नहीं है। तुम्हारी बात से हम सहमत नहीं हैं। यदि झूठ के बिना चल ही नहीं सकता तो झूठे-कपटी तो फुटपाथ पर बहुतेरे भटक रहे हैं। आपकी बुद्धि कमजोर है, इसलिए झूठ को महत्त्व देते हो। 'झूठ के बिना चल ही नहीं सकता' - ऐसा यदि आप गाँधीजी को बोलते तो वे आपको डाँट देते, मैंने तो क्षमा कर दिया। गाँधीजी सच्चाई के कारण वकालत में भले कम सफल हुए, लेकिन फिर भी सत्य बोलनेवाले वकीलों का इतना प्रभाव पड़ता है कि न्यायाधीश उन्हींकी बात मानते हैं। बाद में गाँधीजी का कितना प्रभाव हुआ ! सत्य के बिना नहीं चल सकता, झूठ के बिना चल सकता है। तुम्हारा यह भ्रम है कि झूठ के बिना गृहस्थी का व्यवहार चल ही नहीं सकता। नहीं, नहीं... सत्य पर डटे रहने में शुरुआत में थोड़ी कठिनाई होती है, बाद में तो ऐसा बढ़िया होता है कि व्यक्ति पाप करने से, व्यर्थ का संग्रह करने से और शास्त्रविरुद्ध कर्म करने से बच जायेगा। उसे जल्दी वैराग्य आयेगा और वह ईश्वर में लग जायेगा। सत्य का आश्रय लेने से ईश्वर में लग जायेगा और झूठ का आश्रय लेने से संसार में फँस मरेगा - यह अनुभव सच्चा है, आपका अनुभव कच्चा है। ईमानदार लोग तो ईमानदार को चाहते हैं लेकिन बेईमान सेठ भी ईमानदार मुनीम चाहता है। बेईमान नेता भी ईमानदार सचिव चाहता है।

ईश्वर को पाने के लिए मनुष्य-जन्म मिला है। व्यवहार को हमारे ध्येय के अनुरूप चलना हो तो झख मार के चले।

जिसको गरज होगी आयेगा,
सृष्टिकर्ता खुद लायेगा।

झूठ-कपट करके हम अला बाँधूँ, बला बाँधूँ करते तो भीख माँगते फिरते। सत्य के बल से बैठ गये तो खिलानेवाला भी तो आया न। सत्य के बिना चमक और महानता नहीं आ सकती - यह भी तो एक सत्य है।

अब कई मंत्री झूठ का सहारा लेकर रुपये इकट्ठे करके देश-विदेश में जमा कराके प्रेत होकर भटक रहे हैं। लाल बहादुर शास्त्री सत्य पर डटे रहे तो क्या व्यवहार नहीं चला ? वे लोगों के दिल पर छा गये।

झूठ से तो अपनी योग्यताओं का नाश होता है, अपना अंतरात्मा मलिन होता है। मिलता तो वही है जो प्रारब्ध में होता है, ऐसा नहीं है कि झूठ से मिलता है। यदि ऐसा ही है तो सब झूठे आदमी सुखी होने चाहिए। झूठे लोग तो झूठ बोलने में बहुत माहिर हैं, फिर क्यों भटकते हैं ? पवित्रता और सच्चाई तथा विश्वास और भलाई से भरा हुआ मनुष्य उन्नति का झंडा हाथ में लेकर जब आगे बढ़ता है, तब किसकी मजाल है कि बीच में खड़ा रहे।

जो बुजदिल होते हैं, वे झूठ का आश्रय लेते हैं। हिम्मतवाले तो सत्य का आश्रय लेते हैं। सत्य ही ईश्वर है।

साँच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।
जाके हृदय साँच है ताके हृदय आप ॥

जिसमें झूठ-कपट करना ही पड़े ऐसे व्यवहार को ठोकर मारो। क्या बिगड़ जायेगा ? झूठे लोग

राजी नहीं होंगे तो क्या बिगड़ जायेगा ? सत्यस्वरूप ईश्वर रूठ जाय तो सब बिगड़ जायेगा। सत्यस्वरूप ईश्वर को रिझाने के लिए झूठ को छोड़ देने से क्या बिगड़ेगा ? झूठ के बिना व्यवहार नहीं चल सकता तो आग लगाओ ऐसे व्यवहार को, जो ईश्वर से दूर ले जाय... ऐसे कर्मों को आग लगा दो। मनुष्य-जन्म बार-बार तो मिलेगा नहीं। फिर वह भी भारत में जन्म, ऐसा सत्संग, ऐसी श्रद्धा, ऐसी सूझबूझ बार-बार तो मिलेगी नहीं।

झूठ के द्वारा क्यों कमजोर बनो, क्यों मरो? अपने-आपमें हिम्मत तो रखनी पड़ेगी न। **अप्प दीपो भव।** अपने दीपक आप बनो। अपने उद्धारक आप बनो। आप स्वयं हिम्मत करोगे तब गुरुकृपा और भगवत्कृपा पचेगी। छूमंतर थोड़े ही हो जायेगा। जो कार्य करने से हम ईश्वर के निकट होते हैं वह पुण्य है और जिस कार्य से ईश्वर से विमुख होते हैं वह पाप है। पाप नहीं करो, पुण्य करो, बस।

भक्त : जीवन का उद्देश्य आत्म-साक्षात्कार ही है, और कोई काम अपने जिम्मे नहीं है। २४ घंटे इसीमें लगे हुए हैं लेकिन उन्नति नहीं हो रही।

पूज्य बापूजी : २४ घंटे इसीमें लगे हैं यह बात झूठी है। आप ६ घंटे तो सोये होंगे, फिर २४ घंटे कैसे लगे रहे ? केवल तीन दिन सतत लग जायें तो ईश्वर प्रकट हुए बिना नहीं रहता। २४ घंटे कई दिनों से लगे ऐसी बात नहीं है। पहले जो आपने अपने में जगत की सत्यता भर दी है। आपने पी एच.डी. कर ली, दूसरों को पी एच.डी. करायी... फलाना किया-ढिमका किया... अब शरीर तो हो गया जर्जर। ईश्वर के लिए तड़प बढ़ती जाय... जिनकी तड़प बढ़ती है उनको भीतर से होता है कि ईश्वर कैसे मिलें ? रामतीर्थ रात-रात भर रोते थे। आप कितनी रातें रोये ? ईमानदारी से बोलो।

भक्त : रोये तो नहीं गुरुदेव, लेकिन...

पूज्य बापूजी : अरे ! ईश्वर-प्राप्ति के लिए रोये नहीं तो फिर क्या ?

इश्क करना और जाँ बचाना ये भी कोई हो सकता है ?
आशिके दिले दर्द वो भी कोई सुख से सो सकता है ?

हम कैसे रात्रियाँ बिताते थे हम जानते हैं। ईश्वर पाने हेतु रोना नहीं आया तो इसका मतलब है अभी संसार में रस आ रहा है। ईश्वर के बिना चैन चला जाय... तब तो काम बने इस बड़ी उम्र में। ईश्वर-प्राप्ति में साधन नहीं, अक्ल-होशियारी नहीं, तड़प चाहिए।

भक्त : प्रभु ! आपमें प्रीति कैसे बढ़े और विषय-विकार कैसे मिटें ?

पूज्य बापूजी : गुरुभक्तों का संग, 'ईश्वर की ओर' तथा 'मन को सीख' इन पुस्तकों का पठन व त्रिकाल संध्या करें।

भक्त : कुण्डलिनी शक्ति कैसे जगायें?

पूज्य बापूजी : अपने बल पर कुण्डलिनी शक्ति जगाने के चक्कर में न पड़ो। 'कैसे जगे ?' इसकी चिंता करोगे तो मेहनत ज्यादा करनी पड़ेगी। केवल ध्यान योग शिविर में आते रहो, शिविर में बैठो। जगाने की चिंता नहीं करो। रेलगाड़ी में बैठ गये तो फिर दौड़ने की चिंता नहीं की जाती, रेलगाड़ी खुद ही दौड़ लेती है। शिविर के वातावरण में कुण्डलिनी जगाने के लिए शक्तिपात अपने-आप हो जाता है। तुम क्या जगाओगे, खुद जग जायेगी। तुम जगाने बैठोगे तो खतरा हो सकता है, लेकिन जग जायेगी तो अपने-आप... जैसे बच्चा दौड़ने लगे तो गिर सकता है लेकिन पिता ने गोद में उठा लिया तो... यहाँ तो गुरुभक्ति से ऐसा हो जाता है कि सीधे गोद में आ जाते हैं।

भक्त : बिना सच्चिंतन के श्वास व्यर्थ न जायें। ऐसी कृपा कीजिये।

पूज्य बापूजी : रात्रि को सावधानी से **सोऽहम्** जपते-जपते सो जायें। सुबह जगें तो जो श्वास चल रहा है उसमें **सोऽहम्** को देखें। श्वास अंदर जाता है तो 'सोऽऽऽ' बाहर आता है तो 'हं' इस प्रकार सदा चलता ही रहता है। केवल हम भूल गये। अभ्यास करो तो यह भूल हटे। चौबीसों घंटे यह जीव 'अजपा जाप' जपता रहता है। उसको

यह पता चल जाय तो निहाल हो जाय।

मानसिक जप सतत चलने लगा तो तीर्थराम में से रामतीर्थ हो गये। सबसे उत्तम, सभी लोग कर सकें ऐसी सरल साधना है - मंत्रजप, भगवन्नाम-जप। जपते-जपते ऐसी आदत पड़ जाय कि होंठ हिले नहीं, जीभ चले नहीं, फिर भी हृदय में जप चलता रहे। उसके अर्थ में मन गमन करता रहे। जप करते-करते उसके अर्थ में ध्यान लगे और मन को स्वाद आ जाय तो फिर उसमें लगता रहेगा। जैसे अभी शिविर में थोड़ा जप-ध्यान का वातावरण मिल गया तो मन को स्वाद आया, आपके दोष भी थोड़े मिटे तो आपको अपनी गलतियाँ भी पता चलती हैं। ऐसा माहौल अगर ४० दिन लगातार मिल जाय तो कहाँ पहुँच जाय आदमी ! जैसे अभी दो दिन मिले तो कैसा फर्क पड़ गया है। ज्यों-ज्यों आप साधन-भजन करते हैं तो देखते हो कि जो लोग निगुरे हैं, भोगी हैं उनके संपर्क से अपने साधन-भजन में कमी आ जाती है। जब अच्छा, सात्त्विक वातावरण मिलता है तो साधन-भजन में बरकत आती है, तब आपको अपनी गलती का भी पता चलता है। संसार में तो हमको शरीर अन्न-जल की तरफ, मन सुविधाओं और यश की तरफ, बुद्धि अपनी विशेषता की तरफ खींचती है और जीवात्मा को परमात्मा अपनी तरफ खींचता है। अब वह परमात्मा की तरफ थोड़ा-बहुत खुद चले तो सत्संग से उसमें मदद मिलेगी। नहीं तो जीव की आदत है संसार की ओर खिंच जाने की, इसलिए देर होती है। ईश्वर की तरफ से देर नहीं है, गुरु की तरफ से देर नहीं है।

सेवाधारियों व सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनी ऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें। (२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी।

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

कंबल ने मुझे पकड़ा है...

बारिश के दिनों में नदी में बाढ़ आ गयी थी। एक रीछ उसमें बहा जा रहा था। नदी किनारे से दो मित्र जा रहे थे। एक ने कहा : ''देखो, वह काला-काला कंबल बहा जा रहा है, मैं ले आता हूँ।''

वह तैरना जानता था। पानी में कूद गया और कंबल को पकड़ लिया। उस बहते हुए रीछ को तो आसरा मिल गया। उसने भी उस व्यक्ति को पकड़ लिया। अब दोनों बहने लगे।

दूसरे मित्र ने कहा : ''कंबल खींचा नहीं जा रहा तो उसको छोड़कर आ जा।''

''मैं तो आना चाहता हूँ, मैं तो कंबल को छोड़ना चाहता हूँ किंतु अब कंबल मुझे नहीं छोड़ रहा है।''

ऐसे ही हम संसार की आसक्ति छोड़ना तो चाहते हैं लेकिन मन में ऐसे संस्कार पड़ गये हैं कि अब संसार की आसक्ति ने हमें पकड़ लिया है। हमें अपने-आपको कमजोर बनाने की आदत पड़ गयी है। संसार की आसक्ति ने हमें इस तरह से बाँध रखा है कि एक नहीं, कई जीवन खप जाते हैं लेकिन हाथ में कुछ नहीं आता...

पति के होते पत्नी विधवा !

किसी गाँव में मुन्नासिंह नाम का एक मनचला व्यक्ति रहता था। किसी कार्यालय में वह छोटी-मोटी नौकरी करता था। कुछ दुष्टों ने सोचा कि 'चलो, उसे बेवकूफ बनाया जाय।'

उनमें से दो आदमियों ने मुन्नासिंह के पास

आकर कहा : ''तुम आदमी तो बड़े भले हो किंतु हमें दुःख हो रहा है क्योंकि हमने तुम्हारे लिए एक दुःखद समाचार सुना है।''

''क्या ?''

''क्या बतायें ? तुम्हारी पत्नी विधवा हो गयी है।''

वह सिर कूट-कूटकर रोने लगा कि 'हाय ! मेरी पत्नी विधवा हो गयी, मेरा तो भाग्य ही फूट गया...'

लोगों ने समझाने की कोशिश की : ''पागल ! बेवकूफ ! तुम जीवित हो तो तुम्हारी पत्नी विधवा कैसे हो सकती है ?''

तब मुन्नासिंह ने कहा : ''क्या मेरे अपने ही लोग मुझसे झूठ बोलेंगे ?'' वह फिर रोने लगा कि 'अरे, तू विधवा कैसे हो गयी रे... ?'

अब जरा सोचो कि पति के होते पत्नी विधवा कैसे हो सकती है ? किंतु जैसा हाल उस मुन्नासिंह का हुआ कि है तो स्वयं जीवित और पत्नी के विधवापने का दुःख मना रहा है, वैसा ही हाल सारे संसार का है। तुम्हारी आत्मा तो अमर है और तुम बोलते हो कि 'हम तो मर गये रे... हम तो खप गये रे !'

सबका प्यारा कौन ?

पहले के जमाने में शौचालयों में आज की तरह फ्लश सिस्टम न था। हरिजन आकर शौचालय की सफाई कर जाया करते थे। ऐसी ही एक हरिजन महिला को उसके राज्य की रानी ने एक टोपी और चाँदी के कंगन देते हुए कहा कि 'तुझे नगर में जो बालक सबसे प्यारा, सबसे सुंदर लगे उसे ये पहना देना।'

दो दिन के बाद रानी ने उस महिला से पूछा : ''नगर में सुंदर-से-सुंदर, प्यारे-से-प्यारा बालक कौन-सा है, जिसे तूने कंगन और टोपी पहना दी ?''

''मैं उसे शाम को ले आऊँगी।''

शाम को वह अपने ही बालक को ले आयी। रानी ने पूछा : ''यह सबसे सुंदर बालक है ?''

''महारानीजी ! क्षमा करना। यह मेरा बालक है। अपना बालक चाहे जैसा भी हो, काला हो कि गोरा, पर अपना बेटा है न ! अपना बेटा सभीको सबसे प्यारा लगता है।''

अपना जीर्ण-शीर्ण शरीर प्यारा लगता है, अपना टूटा-फूटा झोंपड़ा भी प्यारा लगता है, अपना मित्र भी प्यारा लगता है चाहे जैसा हो; फिर भगवान तो वास्तव में अपने हैं, प्राणिमात्र के परम सुहृद हैं। यदि यह बात हम समझ जायें तो भगवान भी प्यारे लगने लगेंगे।

उत्थान-पतन के तीन कारण

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

तीन कारणों से हमारा उत्थान होता है :

(१) आकर्षणों का त्याग

(२) पराये यश के प्रति असहिष्णुता का त्याग

(३) इन्द्रियों और मन की चपलता पर नियंत्रण।

रुपये-पैसे का आकर्षण, रूप का आकर्षण, वस्तुओं का आकर्षण - इन आकर्षणों में अगर आपका चित्त उलझता है और आप उसे उलझने दें तो विनाश होता है। यदि इन आकर्षणों से बचने के लिए जप, प्राणायाम, उपासना, ध्यान आदि का आधार लिया तो उन्नति होती है।

किसीकी ऊँचाई, यश देखकर असहिष्णुता होती हो तो उससे बचें। यदि कोई अपने को श्रेष्ठ साबित करना चाहे अथवा अपनी गलती ढाँकना चाहे तो समझो, असहिष्णु है। माता-पिता या गुरुजन हमारी भलाई के लिए हमारी घुटाई-पिटाई करते हैं और यदि हम उससे उलटा अर्थ ले लेते हैं, असहिष्णु हो जाते हैं तो हमारा पतन होता है और सहिष्णु हो जाते हैं, सीधा अर्थ लेते हैं कि 'हमारी भलाई के लिए बोल रहे हैं।' तो हमारा उत्थान होने लगता है।

अपनी गलती आप ही खोजें। यदि आप नहीं खोज सकते और कोई बताता है तो गलती बताने की उसकी कृपा को आभारपूर्वक, धन्यवादपूर्वक स्वीकार करें। इससे जल्दी उन्नति होती है।

इन्द्रियों और मन की चपलता से पतन होता है। साधन-भजन, जप-तप-नियम करके उनको नियंत्रित करने से उत्थान होता है।

आकर्षणों का त्याग, सहिष्णुता और मन-इन्द्रियों का संयम - ये तीन गुण यदि जीवन में हैं तो छोटे-से-छोटा आदमी भी महान हो जायेगा।

आत्मपद पाने के लिए ये तीन बातें नितांत जरूरी हैं। मन की चपलता, चंचलता को कम करने के उपाय जानकर प्रतिदिन ध्यान करें, ताकि वह कम होती जाय। विषयों की तरफ इन्द्रियों के आकर्षण से बचने के लिए एकांतवास, विषयों की तुच्छता का विचार, संतों का संग और शास्त्रों का मनन करे तो मनुष्य इसी जन्म में परमात्मा को पा सकता है।

गड़रिये को अथवा अनपढ़ आदमी को प्राचार्य नहीं बनाया जाता। योग्य व्यक्ति को ही यह पद मिलता है। इसी प्रकार मुक्ति का अधिकारी मनुष्य-शरीर ही है। चौरासी लाख जन्मों के बाद प्राप्त होनेवाला यह मनुष्य-जन्म केवल परमात्म-प्राप्ति के लिए ही मिला है, समस्त दुःखों, चिंताओं, भयों, विकारों और बंधनों से मुक्त होने के लिए ही मिला है।

इतना बढ़िया मौका मिला है फिर भी हम गलती यह करते हैं कि इस मौके को छोटी-छोटी चीजों के आकर्षण में ही गँवा देते हैं और अपने को बड़ा चतुर मानते हैं।

संत तुलसीदासजी कृपा करके कहते हैं :

चतुराई चूल्हे परी पूर पर्‍यो आचार।
तुलसी हरि के भजन बिन चारों वरन चमार॥

हम चमड़े के शरीर को पाल-पोसकर जीवन पूरा कर देते हैं। असली चतुराई तो इसमें है कि हम हजारों जन्मों के संस्कार मिटाकर, हजारों जन्मों के कर्मजाल को विवेक, पुरुषार्थ व सत्कर्म की कैंची से काटकर निर्बंध हो जायें।

साधजना मिल हरजश गाइये...

सत्पुरुषों का सान्निध्य पाकर पहले आत्मानुभव कर लेना चाहिए। फिर जो होगा देखा जायेगा...

✻

श्री उड़िया बाबा

[गतांक से आगे]

एक बार लोगों ने आपको किसीके दोष बतलाकर यह प्रार्थना की कि 'उसे यहाँ से निकाल देना चाहिए।' आप बोले : 'क्या तुम उसे भगवान की सृष्टि में से भी निकाल सकते हो ?' आपके लिए तो अपना कुछ था नहीं, फिर किसे कहाँ से निकालते ? यदि कोई व्यक्ति आपको तंग करता और दूसरे लोग उसे रोकते तो आप तंग करनेवाले का ही पक्ष लेते थे । आप कहीं जा रहे हों, उस समय यदि आपके आगे चलनेवाले व्यक्ति को कोई हटाना चाहता तो आप उसे तुरंत रोक देते अथवा रोकने से पहले ही रास्ता काटकर उससे आगे निकल जाते ।

आपकी उदारता तो सर्वजन-प्रसिद्ध थी । आपके पास फलों और मिठाइयों का ढेर लगा रहता और आप मुक्त-हस्त से उन्हें लुटाते रहते थे । किसीको शंका हुई तो उसने पूछा : ''महाराज ! आप हर समय प्रसाद क्यों बाँटते रहते हैं ?'' तो आप बोले : ''यह हमारा शौक है । लोगों को जैसे सुलफा-गाँजा या बीड़ी-सिगरेट का शौक होता है, इसी प्रकार मुझे दूसरों को खिलाने का शौक है ।'' किंतु खाने का आपको कभी कोई चाव नहीं था । दूध, फल आदि से भी आपको उपरामता ही थी । लोगों के आग्रह से भले ही आप कुछ स्वीकार कर लें लेकिन पेटभर अन्न तो आप तभी लेते थे, जब भिक्षा की मोटी-मोटी रोटियाँ मिलती थीं । कैसे ही व्यंजन हों, उन्हें रसबुद्धि से खाते तो आपको किसीने कभी देखा ही नहीं । भोजन के समय आपका मन और नेत्र मानों, कहीं अन्यत्र ही लगे रहते थे ।

आप कैसी भी नयी या बीहड़ जगह में चले जायें, साथ के सभी लोगों के भोजन की व्यवस्था सहज में हो जाती थी । जब कभी आप लम्बे समय तक एक ही स्थान पर रहते तो भण्डारों का ताँता लगा रहता था । कई बार यह भी देखा गया कि भण्डारों में बहुत थोड़ी-सी खाद्य-सामग्री से ही अनेक लोगों की उदर-पूर्ति हो जाती थी ।

भक्तजन आपमें साक्षात् अपने इष्टदेव की झाँकी के दर्शन करते थे । शिवरात्रि के अवसर पर कुछ भक्त आपको भगवान शंकर मानकर आपका अभिषेक करते तो श्रीकृष्ण जन्माष्टमी और शरद पूर्णिमा के अवसर पर कुछ श्रीकृष्ण रूप में आपकी झाँकी को सजाते एवं आरती उतारते तो श्रीराधाष्टमी और नवरात्रों में कुछ भक्त देवीरूप से भी आपका पूजन करते थे । आपश्री भक्तों के अपने थे । उनके लिए कुछ भी बनने में आपको कोई आपत्ति नहीं थी । परंतु सब कुछ बनकर भी आप कुछ नहीं बनते थे । आप तो निरंतर स्वस्वरूप में ही प्रतिष्ठित रहते थे, सब प्रकार के खेल करके भी आप उनसे पूर्णतया असंग थे ।

आप सदैव समाधिस्थ ही रहते थे, अपने स्वरूप में स्थिति आपका सहज स्वभाव हो गया था । परंतु एक दुखद बात यह हुई कि आपको बहुमूत्र का भयंकर रोग हो गया । यह क्या लीला थी ! इस रोग का कारण डॉक्टर और वैद्य भी नहीं बतला सके । एक बार तो महाराजजी ने स्वयं कहा था कि 'ये लोग मेरे रोग का निदान क्या जानें ?' लेकिन इस शारीरिक रोग के होते हुए भी आपकी आत्मस्थिति में कभी कोई अंतर नहीं पड़ा । शरीर यद्यपि कुछ स्थूल हो गया था और दुबर्लता भी प्रतीत होती थी, इसके बावजूद भी पैदल चलने में इतनी तीव्रता थी कि २५-२५, ३०-३० मील एक दिन में चल लेते थे । आपके साथ चलनेवालों को भागना पड़ता था । यात्रा करने के लिए आप सवारी पर तो कभी बैठते ही नहीं थे । लेकिन अंत में जब अत्यधिक शारीरिक निर्बलता के कारण आपने

बाहर आना-जाना बंद कर दिया तो उस अवस्था में 'प्रेम में नेम नहीं होता' इस सत्योक्ति का परिचय दिया। वह घटना इस प्रकार घटित हुई :

पूज्य हरिबाबाजी ने वि. सं. २००४ की होली का उत्सव बाँध पर करने का निश्चय किया। इधर ७-८ वर्ष से श्री हरिबाबाजी का उत्तर भारत की सर्वमान्या संत पूजनीया माँ श्री आनंदमयी से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया था।

पूज्य बाबा के बाँध के उत्सव में माँ ने एक मास के लिए आना स्वीकार कर लिया था। आपश्री तो पहले से ही श्री हरिबाबा के उत्सव में आया करते थे और इस बार भी आना स्वीकार कर चुके थे। किंतु अब अपने दुर्बल स्वास्थ्य के कारण आप पैदल चलकर वहाँ पहुँचने योग्य नहीं थे।

माँ ठीक समय पर उत्सव में पहुँच गयीं, किंतु आपके न पहुँचने से बाबा को बहुत असंतोष हुआ। अतः वे माँ को साथ लेकर कार द्वारा वृन्दावन आये और आपसे कार में ही बैठकर बाँध पर चलने का आग्रह किया। किंतु अभी तक आपका किसी भी सवारी में यात्रा न करने का नियम अक्षुण्ण रूप से चल रहा था। अतः आप कोई निश्चित उत्तर न दे सके। एक ओर आपका नियम था और दूसरी ओर बाबा का प्रेम। रात के बारह बज गये, किंतु कोई बात तय न हो सकी। अंत में बाबा और माँ तो सो गये, आपने बाबा के प्रेम का ही आदर कर रात के दो बजे उन्हें सूचना दिये बिना ही एक दूसरी कार से बाँध पर जाने के लिए प्रस्थान कर दिया। बाबा सवेरे पाँच बजे कीर्तन करके जब बाँध पर जाने के लिए तैयार हुए, तब उन्हें आपके चले जाने की सूचना मिली। इस प्रकार प्रेम के आगे आपने अपने नियम को विदा कर दिया।

उसी साल शीतकाल में बाबा आपके पास पुनः वृन्दावन आये। एक-दो वर्ष से उनकी इच्छा आपश्री और माताजी को पंजाब ले जाने की थी। अब सवारी में न बैठने का आपका नियम तो टूट ही चुका था। इसलिए यह योजना बनायी गयी कि कुछ महात्माओं, भक्तजनों और रासमण्डली के साथ पंजाब के कुछ स्थानों की यात्रा की जाय। इस योजना के प्रधान संचालक थे स्वामी श्री कृष्णानंदजी अवधूत। इस यात्रा का प्रधान उद्देश्य यह भी था कि उनके गुरुदेव श्री त्रिवेणीपुरीजी महाराज (खन्नावाले) के दर्शन किये जायें। वे बहुत उच्चकोटि के महापुरुष थे।

तीन दिन दिल्ली, एक दिन कुरुक्षेत्र और तीन दिन अम्बाला में ठहरकर आप सभी खन्ना पहुँचे। यहाँ नौ दिन का कार्यक्रम था। पूज्य श्री त्रिवेणीपुरीजी महाराज इन अतिथियों को पाकर गद्गद हो उठे और इन सबको भी उनके दर्शन पाकर बड़ा सुख मिला।

माताजी तथा अन्य कुछ व्यक्तियों को साथ लेकर एक दिन श्री हरिबाबाजी सरहिन्द में गुरु गोविन्दसिंहजी के पुत्रों के बलिदान-स्थान के दर्शनार्थ गये। वहाँ आपका स्वास्थ्य काफी बिगड़ गया। आपकी ऐसी शोचनीय स्थिति देखकर माँ और बाबा को बहुत दुःख हुआ और उन्होंने आगे यात्रा करने का संकल्प त्याग दिया। बस, दूसरे दिन सवेरे चार बजे ही सोलन के राजासाहब की गाड़ी से माँ एवं आपश्री ने प्रस्थान किया और वृन्दावन लौट आये। उसी रात को बाकी के सब लोग भी रेल और मोटर द्वारा वृन्दावन चले आये।

वृन्दावन लौटने पर आपको ज्वर आ गया और उसने उग्र रूप धारण कर लिया। आपश्री के स्वास्थ्य-लाभ के लिए श्री हरिबाबाजी और माँ आनन्दमयी ने कई आध्यात्मिक अनुष्ठान प्रारम्भ कर दिये। परंतु वहाँ तो लीला ही कुछ दूसरी थी। इन अनुष्ठानों से कुछ लाभ न होता देखकर श्री बाबा और माँ ने आपसे कहा कि 'आपके अस्वस्थ होने से सबको बहुत दुःख है। इसका निवारण आप अपने संकल्प ही से कर सकते हैं।'

इस प्रेम-प्रार्थना का फल यह हुआ कि महाराजजी ने अपने संकल्प ही से अपने-आपको पूर्णतया स्वस्थ करके सबकी चिंता और दुःख को दूर कर दिया। यह महाराजजी की अपनी ही लीला और आत्मशक्ति का चमत्कार था। इतने में ही होली के दिन समीप आ गये।

(क्रमशः)

सत्संग बिना सुख-शांति नहीं...

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

नास्तिक लोग तो विषय-विकारों में, भोग-विलास में, अश्रद्धा में उलझ ही जाते हैं किंतु आस्तिक भी आत्मज्ञान के बिना उलझनों में उलझ जाते हैं। निगुरे तो उलझते ही हैं किंतु सगुरे भी यदि सत्संग का रहस्य नहीं समझते तो उलझ जाते हैं।

संसार की वस्तुएँ आने-जानेवाली हैं और आत्मा-परमात्मा नित्य है। आत्मा-परमात्मा से योग करें और संसार को द्रष्टाभाव से देखते जायें। सत्संग का मनन करके जब तक वे वचन अपना अनुभव नहीं बनते, तब तक हृदय की बेचैनी जड़मूल से खत्म नहीं होती।

बिनु रघुवीर पद जिय की जरनी न जाई...

उस आत्मपद को पाये बिना हृदय की तपन नहीं मिटती। इसलिए चाहे कोई मस्जिद में जाय, गिरजाघर में जाय अथवा मठ-मंदिर में जाय किंतु इन सबका फल यही है कि घूम-फिरकर अपने हृदय-मंदिर में आये। इसलिए प्रयत्नपूर्वक हृदय-मंदिर में आने का अभ्यास करें।

भगवान या गुरु, जिनका भी आप चिंतन करें, पहले मन-ही-मन उनसे थोड़ा मानसिक सम्बन्ध स्थापित कर लें। फिर एकटक उनकी ओर देखें। इससे मन की चंचलता कम होगी। उसके बाद जप-ध्यान करें। इससे मन थोड़ा नियंत्रित होगा। जीवन में विवेक भी चाहिए।

सुख स्वप्ना दुःख बुलबुला, दोनों हैं मेहमान।
दोनों बीतन दीजिये, जो भेजे भगवान॥

'स्वप्न में बहुत सुविधाएँ मिलती हैं तो भी वे स्वप्नमात्र हैं और असुविधाएँ होती हैं तो भी वे स्वप्न हैं। ऐसे ही उतार-चढ़ाव शरीर और मन तक असर करते हैं। शरीर और मन बदलनेवाले हैं, आत्मा-परमात्मा अबदल है।'- ऐसा चिंतन करके अपने आत्म-परमात्म स्वभाव में आ जायें।

जगत की बहुत बातें सोचने-विचारने से और जगत को सच्चा मानने से जीवन में उथल-पुथल होती ही रहेगी। परमात्मा की बातें सुनने से, परमात्मा की स्मृति करने से और परमात्मा के ज्ञान में टिकने से जगत की चोटें नहीं लगतीं।

जो नास्तिक हैं उन्हें परिस्थितियों के थपेड़े झेलने पड़ते हैं, जो आस्तिक हैं उन पर परिस्थितियों का प्रभाव ज्यादा नहीं पड़ता किंतु जो सत्संगी हैं और साधना करते हैं उनके लिए परिस्थितियाँ कोई महत्त्व नहीं रखतीं।

जो दुःखों से डरता है वह ज्यादा दुःखी होता है। किंतु 'दुःख आया है... हो-होकर क्या होगा ? रोटी तो उसको देनी ही है और लेकर तो हमारे बाप-दादा भी नहीं गये, तो हम क्या ले जायेंगे ? कोई थोड़ा छोड़कर जायेगा तो कोई ज्यादा छोड़कर जायेगा।' ऐसा जो देखता है वह मन को घुमा-फिराकर भगवद्ज्ञान में ले आता है, भगवत्शांति में ले आता है। अगर मन को संसार के तेरे-मेरे में लगाया तो कितना भी यत्न करो, वह बहिर्मुख हो जायेगा। शरीर का चिंतन, शत्रु-मित्र का चिंतन, सुख-दुःख का चिंतन सब तनावों को भरनेवाला है और भगवद्ज्ञान, भगवज्जप व भगवद्ध्यान सब दोषों को हरनेवाला है।

देह में अपनत्व नहीं रहेगा तो वस्तुओं में ममत्व नहीं रहेगा। वस्तुओं में ममत्व नहीं रहेगा, आसक्ति नहीं रहेगी तो सर्वहितकारी प्रवृत्ति होगी। सर्वहितकारी प्रवृत्ति होने से स्वार्थ का नाश हो जायेगा। स्वार्थ का नाश होते ही परमात्मा का सुख उभरेगा। निष्कामता मोह को हर लेती है और प्रेम

को जन्म देती है तथा परमात्म-प्रेम नित्य नवीन आनंद देता है, नवीन सुख देता है।

मनुष्य-लोक में वही बुद्धिमान है जिसने अपने दिल को दिलबर परमात्मा के ज्ञान से, परमात्मा की शांति से, परमात्मा के आनंद से भर रखा है। वह पृथ्वी पर का देव है।

संसार का सुख तनाव तथा मुसीबतें ले आता है और परमात्मा का सुख सारे तनावों, सारी मुसीबतों को भगा देता है। बाहर की वाहवाही तथा वस्तुओं का सुख पाना पराधीन जीवन है और परमात्मा का सुख पाना स्वतंत्र जीवन है।

अविवेक का नाश होकर नासमझी कम होते ही समझदारी का सच्चा सुख मीठा लगने लगता है। जो समझदारी के सुख से विमुख होते हैं उनको कुछ मिल जाता है तो उच्छृंखल हो जाते हैं और कुछ चला जाता है तो तनाव में आ जाते हैं। जिन्होंने परमात्म-सुख पाया है, उनको राज्य मिलता है तो भी नम्रता से चलाते हैं। राजा हरिश्चंद्र को राज्य छोड़कर चांडाल के यहाँ श्मशान में मुर्दा जलाने की नौकरी करनी पड़ी तो भी उन्होंने शांति से निभा ली। कहाँ तो चक्रवर्ती राजा और कहाँ सब छूट गया ! उन्होंने चांडाल के यहाँ नौकरी की, उनकी पत्नी तारा ने बर्तन माँजने का काम किया और पुत्र रोहित की साँप के काटने से मृत्यु हो गयी। तारा बेटे का शव जलाने के लिए श्मशान में आयी तो हरिश्चंद्र बोलते हैं कि ''कुछ पैसे दो तभी शव को जला सकती हो।''

तारा : ''यह तो आपका बेटा है। मैं आपकी पत्नी हूँ।''

''ठीक है। किंतु मैं यहाँ नौकरी करता हूँ। मालिक ने कहा है कि कोई भी मुर्दा जलेगा तो इतना कर लगेगा।''

''मैं कहाँ से लाऊँ ?''

आखिर तारा ने अपना वस्त्र फाड़कर हरिश्चंद्र को उसका थोड़ा-सा टुकड़ा दे दिया लेकिन चित्त में क्षोभ न हुआ। वहाँ भगवान प्रकट हो गये !

हमारा व्यवहार जितनी सच्चाई से होता है, हमें सत्य उतना ही प्रिय लगता है। संसार जितना अधिक प्रिय लगता है, उतना ही छल-कपट बढ़ता है। सच्चा सुख पाने के लिए भगवत्सुख, भगवत्स्मरण, भगवत्सेवा व भगवज्जनों का संग है और नकली सुख पाने के लिए संसार की गड़बड़ियाँ हैं।

भगवत्सुख, भगवत्स्मरण, भगवत्सेवा और भगवज्जनों का संग यह साधना की आरंभिक अवस्था है। मध्यावस्था में त्याग आयेगा, संसार अंदर से फीका लगता जायेगा। साधना की अंतिम अवस्था में अंतरात्मा का रस प्रकटता जायेगा और अंतरात्मा का रस प्रकटना ही मनुष्य-जीवन का फल है।

गीता प्रश्नोत्तरी

९१. कौन प्राणी पापकर्म के फल से मुक्त होता है ?
९२. योगी लोग क्यों कर्म करते हैं ?
९३. प्राणी किससे मोहित होता है ?
९४. योग किसे कहते हैं ?
९५. प्राणी को दुःख देनेवाला कौन है ?
९६. मन को कैसे वश में किया जाता है ?
९७. मुझसे परे कुछ भी नहीं है इस कथन का उदाहरण या दृष्टान्त दीजिये ?
९८. माया से कौन तर जाता है ?
९९. कौन-सा महात्मा मिलना बहुत दुर्लभ है ?
१००. भगवान ने गीता में 'क्षेत्र' किसे कहा है ?

पिछले अंक के प्रश्नों के उत्तर

८१. जो आत्मा में रमण करता है ८२. बिना शास्त्र के प्रमाण के कथन को ८३. जिसे प्रकृति के कर्म का ज्ञान न हो ८४. काम ८५. धर्म की हानि और भक्त के दुःख में ८६. जो भक्त मुझे जिस प्रकार भजते हैं ८७. गुण और कर्म के आधार पर ८८. विनम्र स्वभाववाले को ८९. कर्मफल का त्याग ९०. ज्ञान।

धन्य है ऐसे वीरों को...

पूर्वकाल में भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था, यह अपनी समृद्धि के लिए सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध था। इसकी प्राकृतिक संपदा व धन-धान्य देखकर व्यापारी लोग सहज ही इसकी ओर आकर्षित हो जाते थे। पुर्तगाली भी भारत से अपना व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित कर रहे थे। उन्होंने भारत के तटीय क्षेत्र में अपना व्यापार आरम्भ कर दिया और अपने गोदाम तथा कोठियाँ बनवायीं। धार्मिक प्रचार-प्रसार का सहारा लेकर वे भोले-भाले भारतीय नागरिकों को धर्मांतरित करके जबरन ईसाई बनाने लगे। उन्होंने अपने व्यापारिक सम्बन्धों को बढ़ाने के साथ-साथ किले बनवाना भी शुरू कर दिया। भारतीय रियासतों की आपसी फूट का सहारा लेकर वे अपने पुर्तगाली राज्य के निर्माण का स्वप्न देखने लगे।

दूरद्रष्टा शिवाजी को पुर्तगालियों की इस उद्दण्ड महत्त्वाकांक्षा का पूर्वानुमान हो गया था। अतः उन्होंने पुर्तगालियों के दमन हेतु कड़े कदम उठाये, जिससे पुर्तगाली कुछ शांत हुए। इसी बीच शिवाजी का असमय देहावसान हो गया, जिससे महाराष्ट्र को बड़ा भारी धक्का लगा। शिवाजी के बाद शासन की बागडोर बाजीराव पेशवा के हाथों में आयी, जो शिवाजी की भाँति दूरदर्शी व पराक्रमी होने के साथ-साथ एक कुशल सेनापति भी थे।

महाराष्ट्र के सीमावर्ती क्षेत्र में निजाम नामक मुस्लिम सल्तनत अपना अधिकार जमाने लगी थी। बाजीराव ने पनपते हुए इस नये पौधे को तुरंत ही उखाड़ फेंकना उचित समझा। उन्होंने अपने छोटे भाई १८ वर्षीय चिमाजी को शासनकार्य सौंपा और कुछ सेना लेकर वे निजाम सल्तनत के दमन के लिए निकल गये। बाजीराव के पराक्रम के कारण पुर्तगाली तारापुर दुर्ग से आगे नहीं बढ़ पा रहे थे, परंतु बाजीराव के दूर जाते ही उन्हें अपनी रोटी सेंकने का मौका मिल गया। बाजीराव का दूसरा शत्रु सिद्दी जौहर भी ऐसे ही अवसर की ताक में था।

शत्रुओं के इस खतरनाक इरादे का पता चलते ही चिमाजी तुरंत सावधान हो गये और दृढ़ता तथा आत्मविश्वास भरे शब्दों में अपने सरदारों से बोले : 'बाजीराव नहीं हैं तो क्या हुआ ? जब तक चिमाजी की रगों में लहू है, हमारे राज्य का कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता। हमें शत्रुओं को उनके घर में ही दफन कर देना चाहिए।'

बिना किसी विलम्ब के चिमाजी ने अपनी सेना को दो भागों में बाँट दिया। एक भाग को कुशल सेनापति के नेतृत्व में सिद्दी जौहर पर विजय पाने के लिए भेज दिया और दूसरे भाग को स्वनेतृत्व में लेकर पुर्तगालियों के अजेय दुर्ग तारापुर पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रस्थान किया।

भोर में जब पुर्तगालियों ने अपने को चारों ओर से शत्रुओं से घिरा पाया तो उनके होश उड़ गये। एकाएक आक्रमण से पुर्तगाली घबरा उठे। उन्हें इस बात का कतई अंदाजा न था कि उन पर इस तरह से अचानक आक्रमण होगा। दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध प्रारम्भ हो गया। धरती रक्त-रंजित होने लगी। वीर मराठे पुर्तगालियों की गर्दन गाजर-मूली की तरह काटते जा रहे थे। हर तरफ लाशों के ढेर लगने लगे, जिससे आसमान में चील-कौए मँडराने लगे। शत्रुओं के अंग-प्रत्यंगों से धरती पटी जा रही थी।

अब मराठा सैनिकों के समक्ष एक गम्भीर समस्या आ खड़ी हुई। दुर्ग पहाड़ी पर था, एकदम सीधी चढ़ाई थी और ऊपर से शत्रुओं की तोपों से गोले-पर-गोले बरस रहे थे। इस कारण ऊपर चढ़ना बहुत मुश्किल हो रहा था। युद्ध शुरू हुए दो महीने बीत चुके थे, परंतु कुछ निर्णय नहीं हो पा रहा था। पुर्तगालियों के साथ-साथ मराठों को भी काफी हानि उठानी पड़ी थी।

एक शाम को दिनभर के युद्ध-श्रम से थके मराठा सरदार एवं सैनिक भोजन करने के लिए बैठे। सभी सरदार एक जगह बैठे थे, जिनमें

चिमाजी के अलावा पंताजी, नीराजी, प्रह्लादराव, बाजी रेटरेकर व उनका युवा पुत्र बापू भी था। चिमाजी ने प्रतिज्ञा की : 'आज से तीसरे दिन के अंत तक, प्राण रहे या जायें, मैं दुर्ग में अवश्य प्रवेश करूँगा।' यह प्रतिज्ञा सुनते ही सबके चेहरों पर विषाद की रेखाएँ उभर आयीं और चारों ओर सन्नाटा छा गया।

'अगर कल तक विजय न हुई तो हम पेशवा के सामने मुँह दिखाने के भी काबिल न रहेंगे।' - एक सरदार ने चिंता व्यक्त की। पुनः नीरवता छा गयी।

रसोइये ने भोजन परोसना आरंभ किया। अभी बाजी रेटरेकर ने पहला ही ग्रास उठाया कि उसे भोजन में से अजीब-सी दुर्गन्ध आने लगी। रसोइये ने गलती से पुराना घी परोस दिया था।

''कैसा घी परोसा है ?'' - रेटरेकर ने क्रोधित स्वर से पूछा।

पास बैठे एक सरदार ने फुसफुसाकर व्यंग्य कसा : 'एक छोटा-सा दुर्ग जीतने में तो दम निकल रहा है, बड़े आये घी खानेवाले।'

ये शब्द रेटरेकर के दिल में गहरी चोट कर गये। उनका सोया हुआ स्वाभिमान जाग उठा और वे बोले : 'हमें ऐसा अपमानित भोजन नहीं करना। चल, बेटा! अब तो दुर्ग जीतकर ही भोजन करेंगे।'

पिता-पुत्र, दोनों ही भोजन छोड़कर चल दिये। बाजी रेटरेकर अपनी सेना में गया और सैनिकों के समक्ष प्रण लिया : 'वीर साथियो ! यह मेरा जूठा हाथ देखो। जब तक दुर्ग फतह नहीं होता तब तक मैं अन्न का एक ग्रास भी न लूँगा।' वीर मराठा सैनिक कहाँ पीछे हटनेवाले थे। सभीने बाजी के वचनों का समर्थन किया। चिमाजी के कुशल नेतृत्व में रात्रि के गहन अंधकार में मराठे पुर्तगाली दुर्ग की ओर चुपचाप रेंगते हुए आगे बढ़ने लगे। काँटों से भरा दुर्गम मार्ग... पग-पग पर फिसलाहट... परंतु मराठों के धैर्य और उत्साह का पारावार न था। सभी कठिनाइयाँ उनके सामने पराजित हो चलीं। लम्बी चढ़ाई के बाद आखिरकार मराठे सफल हो गये। अब दुर्ग की दीवार उनके सन्निकट थी। दुर्ग के परकोटे से जब पहरेदार ने नीचे देखा तो वह भौंचक्का-सा रह गया। मराठों की सैन्य-पंक्तियों से सारा किला आवृत हो चुका था। पहरेदार चिल्ला उठा : 'दगा ! दगा ! शत्रु ऊपर आ गये हैं।'

शोर सुनकर पुर्तगाली सैनिक जाग गये और क्या देखते हैं कि चिमाजी की तलवार से विदीर्ण पहरेदार का सिर जमीन पर लुढ़क रहा है। भीषण युद्ध प्रारम्भ हो गया। इससे पहले कि पुर्तगाली सँभल पाते मराठे काल की तरह उन पर टूट पड़े। पुर्तगालियों को अचानक हुए इस आक्रमण की जरा भी भनक न पड़ने के कारण वे हिम्मत हार गये और पराजित होने लगे। बाजी दुर्ग के ध्वज की ओर बढ़ते जा रहे थे। अभी ध्वज के समीप पहुँचे ही थे कि एक पुर्तगाली सैनिक का वार उनकी पीठ पर लगा। घाव गहरा था, बाजी वहीं मूर्च्छित हो गये। इतने में उनका बेटा बापू वहाँ आ गया और उसने पिता पर वार करनेवाले उस पुर्तगाली की गर्दन धड़ से अलग कर दी। पिता को मूर्च्छित पाकर पुत्र की आँखें बरस पड़ीं। वह पुकार उठा :

''पिताजी ! पिताजी !! देखिये, किले पर हमारी जीत हो चुकी है। पिताजी ! आँखें खोलिये।''

बाजी रेटरेकर के शरीर में अभी चेतना थी। पुत्र की आँखों में आँसू देखकर वे बोले : ''बेटा ! सिंहपुत्र की आँखों में ये आँसू शोभा नहीं देते। अब मेरी अंतिम इच्छा शीघ्र पूरी कर।''

बापू को समझते देर न लगी। उसकी तलवार के एक ही वार से पुर्तगाली ध्वज जमीं पर आ गया। उसकी जगह भगवा ध्वज लहराने लगा। बाजी रेटरेकर की आखिरी इच्छा पूरी हो चुकी थी। उनका शरीर तो चिरनिद्रा में सो चुका था परंतु उनके चेहरे के भाव प्रसन्नता, उल्लास और संतोष प्रकट कर रहे थे।

धन्यवाद है ऐसे वीरों को ! वे निश्चय ही प्रशंसा के पात्र हैं, जिन्होंने मातृभूमि के लिए, भारतीय संस्कृति के सम्मान के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। जिनकी देह अपने क्षेत्र के लिए युद्ध करने में लगी, लेकिन विदेही आत्मा परमेश्वर का चिंतन करके सद्गति को प्राप्त हुआ।

सफलता का मूलमंत्र : आत्मबल

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

अखंडानंद सरस्वती, उड़िया बाबा और दूसरे उच्चकोटि के संत हिमालय-बदरीनाथ की यात्रा करने गये।

यात्रा से लौटते हुए एक दिन संतों की मौज आ गयी कि 'रोज भिक्षा माँगकर खाते हैं, आज स्वयं बनायेंगे। चलो, सब आटा-दाल आदि ले आयें।'

कोई आटा माँग लाया, कोई दाल ले आया, कोई गुड़ ले आया तो कोई नमक आदि ले आया। किंतु लड्डू बनाने के लिए घी कोई भी नहीं लाया। २५ साधुओं के लिए लड्डू बनाने थे। बिना घी के कैसे बनते ?

उड़िया बाबा ने अपने शिष्य पलटू से कहा : ''पलटू, पलट जरा।''

इतने में दूसरा साधु बोला : ''मैं ही ले आता हूँ।''

''अच्छा, जा।''

वह साधु घी की दुकान पर जाकर खड़ा हो गया। सब ग्राहकों के निपटने के बाद साधु ने अपना कमंडलु आगे करते हुए दुकानदार से कहा : ''सेठजी ! थोड़ा-सा घी दे देना।''

सेठ ने कहा : ''साधु होकर घी की बात करते हो ? शर्म नहीं आती ? जाओ, जाओ, यहाँ से।''

वह साधु बेचारा उतरा-सा मुँह लेकर आ गया। उड़िया बाबा ने पलटू से कहा : ''जा भाई ! तू ले आ।''

पलटू गया गाँव के मुखिया के पास और बोला : ''नारायण हरि...''

मुखिया अखबार पढ़ रहा था। उसने कुर्सी पर बैठे-बैठे ही पूछा : ''महाराज ! क्या है ?''

''ऐसे नहीं। कुर्सी से उठो, अखबार फेंको, प्रणाम करो और कहो कि 'महाराज ! आपने बड़ी कृपा की... हमारे द्वार को पावन कीजिये।' साधु के लिए बैठने की व्यवस्था करो। तुम हिन्दू हो। कुछ तो मर्यादा रखो। भारतीय संस्कृति के राजा-महाराजा भी संतों का आदर करते थे। साधु जिसके द्वार से खाली हाथ जाता है उसका विनाश हो जाता है। बेटा ! तुम तो गाँव के मुखिया हो।''

''महाराज ! गलती हो गयी।''

मुखिया ने आदर से बिठाया। फिर नम्रतापूर्वक कहा : ''महाराज ! क्या सेवा करूँ ?''

''बेटा ! और तो कुछ नहीं, २०-२५ साधु आये हैं, बदरीनाथ की यात्रा करके लौटे हैं। भंडारा करने की इच्छा थी। दाल, चावल, आटा, नमक, मिर्च, आलू आदि सब आ गया है। केवल घी नहीं आया। तुम गाँव के मुखिया हो। अगर तुम्हारे घर में भगवान ने दिया है तो दो सेर घी दे दो, नहीं तो दुकानदार से दिलवा दो। जल्दी करो।''

मुखिया उठा और उसे दो सेर घी दिलवा दिया।

मनुष्य में आत्मबल हो तो वह हर कार्य करने में सफल हो जाता है।

घर से जाओ खा के तो बाहर मिले पका के।
घर से जाओ भूखे तो बाहर मिले धक्के ॥

यह होगा कि नहीं... यह हो गया तो... यदि न बोला तो...

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति।

(गीता : ४.४०)

'विवेकहीन और श्रद्धारहित संशययुक्त मनुष्य परमार्थ से अवश्य भ्रष्ट हो जाता है।'

अपने हृदय में दृढ़ निश्चय हो तो बाह्य जगत में भी सफलता मिलती है।

✲

संत अय्यवार

❋ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❋

तमिलनाडु में एक कन्या का जन्म हुआ। उसके माता-पिता बचपन में ही चल बसे। जिस दंपति ने उसका पालन-पोषण किया उसने उसका नाम रखा अय्यवार।

अय्यवार पढ़ने में तो होशियार थी ही, कविताएँ भी बना लेती थी। जब वह १६ वर्ष की हुई तब उस दंपति ने उसे विवाह करने के लिए कहा।

अय्यवार ने कहा : ''मुझे हाड़-मांस के शरीर से शादी करके अपना जीवन भोगी नहीं बनाना है। मुझे तो परमेश्वर की भक्ति करके परमेश्वर को ही पाना है।''

अय्यवार के मना करने पर भी वे उसकी शादी की तैयारियाँ करने लगे। रोज रात्रि को कन्या भगवान को पुकारती कि 'मेरा सौंदर्य और जवानी मुझे संसार में घसीट रही है। भगवान ! ऐसा सौंदर्य किस काम का जो मुझे संसार की वासनाओं में घसीट ले जाय ? फिर बुढ़ापे में आहें भरती-भरती अंत में श्मशान की यात्रा करूँ किंतु तेरे द्वार तक न पहुँच पाऊँ ? हे भगवान ! मैं तेरी बालिका हूँ... तेरी शरण में हूँ... तू कुछ भी करके मेरा सौंदर्य और जवानी छीन ले और अपनी भक्ति का दान दे दे।''

एक रात्रि को वह कन्या खूब रो-रोकर कातरभाव से प्रार्थना करते-करते सो गयी। सुबह उठी तो उसका सौंदर्य गायब था और वह अधेड़ उम्र की लगने लगी ! उसके पालनकर्ता माता-पिता को आश्चर्य हुआ कि 'यह कैसे हो गया ? अब इस कन्या से कौन शादी करेगा ?'

तब अय्यवार ने सारी बात बताते हुए कहा : ''मैंने ही भगवान से मेरी जवानी और सौंदर्य छीन लेने के लिए प्रार्थना की थी और कहा था कि तू मुझे ऐसा बना दे कि मुझे कोई पसंद न करे, ताकि मैं संसार की दलदल में न गिरूँ।''

जब कुटुम्बियों ने अय्यवार से उसकी प्रार्थना स्वीकार किये जाने की बात सुनी और उसकी भगवत्प्राप्ति की तीव्र इच्छा को जाना, तब उनके हृदय में भी अय्यवार के लिए श्रद्धा जाग उठी और वे बोले : ''१६ साल की कन्या ४० साल की दिखने लगी ! रातोंरात सौंदर्य गायब ! रातोंरात यौवन गायब ! यह किसी साधारण व्यक्ति का काम नहीं है। विश्वनियंता ने ही तेरी प्रार्थना स्वीकार की है और तुझे ऐसा रूप दे दिया है। अतः अब हमने भी तेरी शादी का विचार बदल दिया है। अब तू खूब भजन कर और ईश्वर के रास्ते पर चल।''

अब अय्यवार का पूरा समय भगवद्भक्ति में बीतने लगा। लोग उसे भक्त अय्यवार के नाम से जानने लगे। भगवन्नाम का वैखरी से जप करते-करते वह मध्यमा में पहुँच गयी, फिर क्रमशः पश्यंति और परा में।

दूसरा सुन सके उस आवाज में बोलना 'वैखरी वाणी' कहलाता है। होंठ और जीभ हिलती रहे किंतु किसीको पता न चले कि हम क्या बोल रहे हैं, इसे 'मध्यमा वाणी' कहते हैं। न होंठ हिलें न जीभ, फिर भी हमें पता चले कि जप हो रहा है, इसे 'पश्यंति वाणी' बोलते हैं। इसके आगे की वाणी 'परा वाणी' है।

उसमें सत्यसंकल्प-सिद्धि आ गयी। वह किसीके लिए शुभ सोच लेती तो उसका शुभ हो जाता। किसीके लिए शुभकामना करती या संकल्प करके कोई चीज दे देती तो उसको सुख-शांति मिलती। उसने कई कविताओं की रचना की और तमिल में एक ग्रंथ भी लिखा - **नीतिवारी विलोरवम्**। उस ग्रंथ में आता है :

'शरीर पानी का एक बुलबुला है। कब फूट जाय कोई पता नहीं और यह धन-वैभव समुद्र की लहरों जैसा है। जैसे समुद्र में लहरें कभी कहीं तो कभी कहीं जाती हैं, वैसे ही इस जीवन में कोई स्थिरता या सार नहीं है। बुलबुलों तथा लहरों जैसे क्षणिक व अस्थिर धन और जीवन को यदि तुच्छ तू-तू, मैं-मैं में खपा दिया तो तुमने कुछ नहीं किया। अगर ऐसे निस्सार जीवन में तुमने ईश्वर को पा लिया तो यह तुम्हारी बुद्धिमानी है, तुम्हारा सौभाग्य है।'

अय्यवार के वचन सुनकर लोग प्रभावित होने लगे। अय्यवार स्वयं तो उन्नत हुई ही, उसने अपने जमाने की कई युवतियों, महिलाओं और माताओं के जीवन को उन्नत बनाने में भी योगदान दिया।

धन्य है अय्यवार की सूझबूझ! संसारी विषय, विकारी सुख शुरू में अच्छे लगते हैं लेकिन बाद में चौरासी लाख योनियों में भटकाते हैं। ईश्वर का रास्ता शुरू में जरा कठिन लगता है लेकिन अंत में ईश्वरीय सुख से सराबोर कर देता है।

अय्यवार की सूझबूझ एवं विवेक-वैराग्य को जो देवियाँ समझ पायेंगी, वे भी सत्स्वरूप ईश्वर के रास्ते सफल हो जायेंगी।

** 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के सभी सेवादारों तथा सदस्यों को सूचित किया जाता है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सदस्यता के नवीनीकरण के समय पुराना सदस्य क्रमांक/रसीद क्रमांक एवं सदस्यता 'पुरानी' है - ऐसा लिखना अनिवार्य है। जिसकी रसीद में ये नहीं लिखे होंगे, उस सदस्य को नया सदस्य माना जायेगा।*

** नये सदस्यों को सदस्यता के अंतर्गत वर्तमान अंक के अभाव में उसके बदले एक पूर्व प्रकाशित अंक भेजा जायेगा।*

गौ-महिमा

कर्णशूल तथा कान से मवाद निकलने पर : ४-४ बूँद गोमूत्र दिन में २ बार कान में डालने से कर्णशूल अवश्य मिटता है। कान से मवाद आता हो तो गुनगुने गोमूत्र से दिन में दो बार कान धो लें। थोड़े ही दिनों में कान से मवाद आना बंद हो जायेगा।

मलावरोध : ५० मि.ली. गोमूत्र में ४ चने जितना गुड़ मिलाकर पिलाने से कब्जियत, सिर भारी रहना, सुस्ती आदि लक्षणों से छुटकारा मिलता है।

गर्भाशय में गाँठ होने पर : गर्भाशय की गाँठों का ऑपरेशन करवाकर जिंदगीभर व्यथा भोगने की आवश्यकता नहीं है। ५० मि.ली. गोमूत्र में भांगरे (भृंगराज) का २५ मि.ली. रस मिलाकर सुबह-शाम पिलाने से गर्भाशय की गाँठें मिटती हैं। आवश्यक हो तो यह प्रयोग छः मास तक चालू रखें।

सूतिका (सुवा) रोग : प्रसूति के बाद होनेवाले इस रोग में ५० मि.ली. देवदार्व्यादि क्वाथ में २५ मि.ली. गोमूत्र मिलाकर ७ दिन तक पिलाने से रुग्णा स्वस्थ हो जाती है।

दाद-खाज-खुजली : प्रभावित अंग पर गोमूत्र से मालिश करें तथा नीम के पत्तों को पानी में उबालकर उस पानी से स्नान करें।

पेट के रोग : २५ मि.ली. गोमूत्र में ३ ग्राम काला नमक व सरसों का १ ग्राम चूर्ण मिलाकर ४ से ७ दिन तक लेने से अजीर्ण, अफरा, कब्जियत आदि रोगों से राहत मिलती है।

कफ तथा साँस फूलना : २५ मि.ली. गोमूत्र में पिपरामूल का १ ग्राम चूर्ण मिलाकर ४२ दिन तक सुबह-शाम पिलाने से कफ, खाँसी, साँस

फूलना आदि से छुटकारा मिलता है।

बालक की छाती में कफ भर जाने पर : १ चम्मच गोमूत्र में १ चुटकी अश्वगंधा चूर्ण मिलाकर सुबह-शाम देने से छाती में से कफ छूटकर निकल जाता है। यह उपचार गाँवों में प्रचलित है।

गोबर के औषधि-प्रयोग

चर्मरोग (दाद, खाज, खुजली) : ताजा गोबर शरीर पर मलें। आधे घंटे बाद गर्म पानी से स्नान करें। कुछ ही दिनों में खुजली छू हो जायेगी।

बिवाइयाँ : फटी हुई एड़ियों पर गाय के गोबर का रस बार-बार लगाने से बिवाई की व्याधि समाप्त हो जाती है।

पसीना रोकने के लिए : २५० ग्राम गोबर के कंडे में २५ ग्राम नमक मिलाकर पीस लें और कपड़छन करें। इस चूर्ण को शरीर पर मलने से पसीना रुक जाता है। पसीने से दुर्गंध आती हो तो कुछ दिनों तक नियमित रूप से यह प्रयोग चालू रखें।

गाय का गोबर पानी में मिलाकर पतला करके पूरे शरीर पर मलें तत्पश्चात् स्नान करें इससे बदन का मैल दूर होता है। त्वचा नरम, मुलायम व कांतियुक्त बनती है। जिस किसीने इसका अनुभव किया है, वह रसायनयुक्त साबुन का उपयोग शायद ही करना चाहेगा।

कील-मुँहासे : गाय का गोबर गर्म करके कपड़े में रखकर उसका रस निकाल लें। उसे हलके हाथ से मुँहासों पर मलें। जो मुँहासे २-४ साल तक नहीं मिटते, वे भी इसके नियमित प्रयोग से मिटने लगेंगे।

सफेद दाग : गोमूत्र में बावची (बाकुची) चूर्ण मिलाकर सफेद दागों पर लेप करने से अथवा गाय के गोबर से दागों पर दिन में २ बार मालिश करके स्नान करने से दाग मिट जाते हैं।

दही, टमाटर, इमली आदि खट्टे पदार्थ एवं लहसुन, प्याज न लें।

शीतला : गाय के कंडों की राख कपड़े से छानकर पूरे शरीर पर हलके हाथ से मलें। इससे शीतला के व्रण मिट जाते हैं। इतना शीघ्र लाभदायी दूसरा कोई भी उपचार उपलब्ध नहीं है। एलोपैथी में इस बीमारी का कोई इलाज नहीं है।

हाथ-पैरों की सूजन में : हाथ-पैरों में मोच आने पर गोबर के कंडे की राख ज्यादा मात्रा में लेकर मोचवाले हिस्से पर रखकर पट्टी बाँध दें। सुबह-शाम दो बार राख बदलें। २-४ दिन में ही मोचवाली जगह की सूजन व पीड़ा मिट जाती है, जैसे आश्रम का सर्वगुण तेल लगाने से मिटती है।

फोड़ा होने पर : गोबर व गोमूत्र मिलाकर घोल बनायें। उसे मिट्टी के बर्तन में उबालकर गाढ़ा करें। फोड़े पर उसका गर्म-गर्म लेप करके, ऊपर रूई रखकर कपड़े से बाँध दें। दिन में दो बार यह प्रयोग करने से कुछ ही दिनों में फोड़ा बैठ जायेगा अथवा उसमें से मवाद निकलकर मिट जायेगा।

मृत गर्भ का प्रसव करवाने के लिए : दूध देती हुई बछड़ेवाली गाय का ताजा गोबर पीस लें, कपड़े से छानकर उसका रस निकालें। १० मि.ली. रस में उसी गाय का ५० मि.ली. दूध मिलाकर गर्भिणी को पिलाने से २-३ घंटे में मृत गर्भ बाहर आ जाता है। इससे ज्यादा समय लगने पर दुबारा इसका प्रयोग कर सकते हैं। मृत गर्भ में ऑपरेशन करवाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

उपरोक्त सभी बीमारियों में औषधि-प्रयोग के साथ-साथ आहार हलका, ताजा व सुपाच्य होना आवश्यक है। भोजन में मूँग, दलिया, लौकी, परवल, तोरई आदि लें। मेवा-मिठाई, खट्टे-तले पदार्थ, गरिष्ठ भोजन से दूर रहेंगे तो इन सीधे-सरल, प्रभावी उपायों से सहज ही रोगों से मुक्ति मिलेगी।

प्रकृति की ऐसी व्यवस्था है कि हम जिस स्थान पर रहते हैं, उसी स्थान पर हमारे लिए आवश्यक जल, धन-धान्य एवं औषधियाँ प्राकृतिक रूप में ही उपलब्ध हैं। हम उनसे अनभिज्ञ होने के कारण ही दवाइयों पर अनावश्यक पैसे खर्च करते हैं। प्रकृति की इस सुंदर व्यवस्था का सदुपयोग करके हम सदैव स्वस्थ जीवन जी सकते हैं। अधिकतर लोग इनका फायदा न लेकर समय, धन व स्वास्थ्य को बिगाड़ लेते हैं।

'बाल संस्कार' पुस्तक से...

मेरा नाम ऐश्वर्य तिवारी है। मैं कक्षा चार का छात्र हूँ। मेरी माँ पूज्य बापूजी द्वारा दीक्षित है।

उसने मुझे आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'बाल संस्कार' पढ़ने को दी। उसमें लिखे प्रयोग करने से मेरी स्मरणशक्ति बढ़ी है। पहले मैंने पहली कक्षा में ७८%, दूसरी में ८०% अंक प्राप्त किये थे परंतु अब गुरुदेव की कृपा से तीसरी कक्षा में ९०% अंक प्राप्त किये।

- ऐश्वर्य तिवारी

धन्य हैं बापूजी के 'बाल संस्कार केन्द्र'!

मैं चौथी कक्षा में पढ़ती हूँ। तीसरी कक्षा में मैं

६०% अंक लेकर पास हुई। पिछले साल बापूजी जब सांताक्रुज में आये थे, तब मैंने उनसे सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली। मैं रोज गुरुमंत्र का जप करती हूँ और हर रविवार को 'बाल संस्कार केन्द्र' में जाती हूँ। इस बार मुझे ९४% अंक मिले हैं। मंत्रदीक्षा लेने के बाद मैंने मांस-मछली खाना छोड़ दिया तो मेरे माता-पिता कहने लगे कि 'जब बच्चे मांस-मछली नहीं खाते तो हम कैसे खायें ?' फिर उन्होंने भी मांसाहार छोड़ दिया।

जब मैं छुट्टियों में अपने गाँव गयी तब वहाँ सवेरे उठकर अपना नियम पूरा करती थी। मेरे दादा-दादी ने मुझे जप करते हुए देखा तो वे कहने लगे : 'हमारी इतनी उम्र हो गयी है, फिर भी हमें इस सच्ची कमाई का पता नहीं है और इस नन्ही बालिका को देखो, अभी से इसे सच्ची कमाई के संस्कार मिले हैं। धन्य हैं बापूजी के 'बाल संस्कार केन्द्र' !'

- शालु सिंह, वरली (मुंबई).

उप-राष्ट्रपति, भारत
VICE-PRESIDENT OF INDIA

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि संत शिरोमणि श्री आसारामजी बापूजी की अमृतवाणी को ''कल्याणनिधि'' शीर्षक से पुस्तकाकार रूप में लिपिबद्ध कर जनसाधारण तक पहुँचाने का महती कार्य संपन्न किया जा रहा है। मानव-सेवा को इष्टभक्ति का माध्यम माननेवाले बापू के बारे में मैं यही कह सकता हूँ कि जिनकी करुणा का प्रसाद क्षेत्र जितना अधिक होता है, श्रीभगवान के साथ उनका तादात्म्य भी उतना ही गंभीर रहता है।

''कल्याणनिधि'' में बहुत ही सरल भाषा में, जनसाधारण को भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ तत्त्वों को आत्मसात् कर सर्वधर्मसमभाव और वसुधैवकुटुंबकम् की भावना के साथ कर्तव्य-पालन की प्रेरणा दी गयी है। इस पुस्तक के अध्ययन के पश्चात् यह तथ्य सामने आता है कि वही धनी है जिसके पास श्रद्धा, शील, लज्जा, संकोच, श्रुत, त्याग और बुद्धि रूपी धन है। आज के तनावपूर्ण, आपाधापी भरे युग में इस पुस्तक के अध्ययन से निश्चय ही भगवत्कृपा का अपार आनंद मिलेगा।

परम पूज्य संत श्री आसारामजी के प्रति श्रद्धाभाव ज्ञापित करते हुए मैं ''कल्याणनिधि'' पुस्तक को प्रकाशित करने के लिए बधाई देता हूँ।

नई दिल्ली
26 सितम्बर, 2003

(भैरोंसिंह शेखावत)

* 'ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि *

शिवगंज (सुमेरपुर, राज.) : सितम्बर-अक्टूबर का महीना राजस्थानवासियों के लिए एक स्वर्णिम इतिहास बन गया। १९ सितम्बर से ८ अक्टूबर के दौरान परम पूज्य बापूजी के चरणकमलों के स्पर्श से राजस्थान की धरा पावन हो उठी।

१९ से २१ सितम्बर तक शिवगंज (सुमेरपुर, राज.) में गीता-ज्ञान की गंगा बही तो २३ व २४ सितम्बर को **आमेट (राज.)** वासी सत्संगामृत से तृप्त हुए। फिर अगले ही दिन अर्थात् २५ सितम्बर को पूज्यश्री **गोगुंदा (राज.)** पहुँच गये, जहाँ गोगुंदा व आस-पास के गरीब-गुरबों, आदिवासियों को सत्संग के साथ मिला आत्मनिष्ठ पूज्य बापूजी का आत्मीयताभरा प्यार एवं पूज्यश्री के ही करकमलों से मिले वस्त्र, बर्तन, मिठाई और यथायोग्य दक्षिणा।

यहाँ भंडारे का भी आयोजन हुआ, जिसमें हजारों गरीबों तथा आदिवासियों ने भोजन-प्रसाद पाया। **'सर्वभूतहितेरताः'** उक्ति के मूर्तस्वरूप पूज्य बापूजी अपने सैकड़ों शिष्यों को साथ लेकर यहाँ घंटों तक उन गरीबों व आदिवासियों के बीच स्वयं ही उनमें बर्तन, कपड़े दक्षिणा आदि वितरित करते रहे। उल्लेखनीय है कि विभिन्न समितियों को ऐसे कार्यक्रमों के लिए पूज्यश्री की ओर से कपड़े, बर्तन, मिठाइयाँ व धनराशि भेजी जाती है।

पूज्यश्री २ लाख रु. भेजते हैं तो गरीबों-आदिवासियों तक पहुँचते-पहुँचते वह राशि ५ लाख रु. हो जाती है, लेकिन सरकार उनके लिए अगर ५० लाख रु. भी भेजती है तो गरीबों तक पहुँचते-पहुँचते... उसमें से आखिर गरीबों तक कितनी पहुँचती होगी, भगवान ही जाने।

उदयपुर (राज.) : लोकलाड़ले पूज्य बापूजी का आत्म-साक्षात्कार दिवस, २७ सितम्बर उदयपुर (राज.) के हिस्से आया, जहाँ उसे एक महोत्सव के रूप में मनाया गया। २६ से २८ सितम्बर तक चले त्रिदिवसीय सत्संग-कार्यक्रम के पूर्व २४ सितम्बर को यहाँ विशाल संकीर्तन यात्रा निकाली गयी।

भारतीय संस्कृति का मंगल प्रतीक है - कलश। साज-सज्जा से युक्त १०८ कलश सिर पर लिये केसरिया वस्त्रधारी साधिकाएँ संकीर्तन यात्रा को सांस्कृतिक जामा पहना रही थीं। श्रद्धालुओं ने मार्ग में जगह-जगह पर पूज्य बापूजी की तस्वीर पर माल्यार्पण किया, आरती उतारी और खुद भी हरिनाम-संकीर्तन के साथ झूम उठे। फिर 'हरि हरि ॐ' धुन की मस्ती में नाचने लगे हजारों-हजारों कदम।

२७ सितम्बर का प्रातःकालीन सत्र खासतौर पर विद्यार्थियों को सुपुर्द था, जिसमें पूज्य बापूजी ने छात्र-छात्राओं के जीवन के चहुँमुखी विकास के लिए उन्हें विविध युक्तियों के साथ शैक्षिक जगत में सफलता-प्राप्ति के लिए सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा भी दी।

ब्रह्मानंद की मस्ती में मस्त पूज्य बापूजी ने आत्म-साक्षात्कार की कुंजियाँ बताते हुए कहा कि **''अगर भय, चिंता, शोक, मोह, राग-द्वेष इत्यादि से छुटकारा पाना है तो यत्नपूर्वक आत्म-साक्षात्कारी महापुरुषों का संग करें, मौन रखें, सत्शास्त्रों का पठन-मनन करें, जप-ध्यान करें। रोज सुबह ब्रह्ममुहूर्त में उठते ही संकल्प करें कि 'मैं अमर तत्त्व को पाऊँगा, जिसे पाने के बाद और कुछ पाना बाकी नहीं रहता।' निर्वासनिक नारायण-तत्त्व में विश्रांति पाने में ये सहायक साधन हैं।''**

सूर्योदय और सूर्यास्त के समय का उपयोग उपासना में करो, चूको नहीं। उस समय की हुई उपासना, प्राणायाम व ध्यान विशेष-विशेष लाभदायी हैं।

जोधपुर (राज.) : पाँच शताब्दियों तक मारवाड़ की राजधानी रहे जोधपुर (राज.) को ३० सितम्बर से २ अक्टूबर तक पूज्यश्री के सत्संग-सान्निध्य का गौरव प्राप्त हुआ। उल्लेखनीय है कि ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापूजी के सत्संग-सान्निध्य के प्यासे साधकों ने उनके सत्संग हेतु 'श्री आसारामायण' के १००८ पाठ किये थे। पूजा-उपासना के पुण्यमय नवरात्रि के दिनों में सद्गुरुदेव को अपने बीच पाकर जोधपुरवासियों का सैलाब स्थानीय गाँधी मैदान में उमड़ पड़ा।

सूर्यनगरी की तपती धूप में भी पूज्यश्री की ब्रह्मज्ञान की आत्मस्पर्शी शीतल अमृतवर्षा में लाखों श्रद्धालुओं ने अवगाहन किया। इन सत्संगों का सोनी, संस्कार और साधना चैनलों के द्वारा हिन्दुस्तान एवं विदेशों के करोड़ों-करोड़ों लोग घर बैठे फायदा लेंगे।

शुभ संस्कारों के सिंचन हेतु १ अक्टूबर का प्रातःकालीन सत्र विद्यार्थियों के लिए रखा गया। नगर के

७० विद्यालयों से हजारों की संख्या में आये छात्र-छात्राओं ने उस विशाल गाँधी मैदान को नन्हा कर दिया। शरीर को स्वस्थ, मन को प्रसन्न, बुद्धि को तेजस्वी बनाने की तथा परिस्थिति के गुलाम नहीं, श्रेष्ठ नागरिक बनने की युक्तियाँ सुनीं और सीखीं भी। उन तपस्वी बालकों ने इतनी विशाल भीड़ में लगातार ३-३ घंटों तक टिकटिकी लगाते हुए पूज्य बापूजी को देखा और सुना। धन्य हैं भारतभूमि के संयमी सितारे!

पूज्य बापूजी ने कहा : **''दुनिया के और देशों में ऐसे विद्यार्थी नहीं मिल पायेंगे।''**

जैसलमेर (राज.) : ३ अक्टूबर को पूज्य बापूजी बाबा रामदेव की नगरी रामदेवरा भादरिया होते हुए जैसलमेर (राज.) पहुँचे। जहाँ ४ अक्टूबर की सुबह को सत्संग-कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। पहली बार जैसलमेर पधारे पूज्य बापूजी ने कहा कि **''जहाँ गीता के ज्ञान का प्रसाद नहीं है, वहाँ लोग शराब-कबाब में सुख ढूँढ़ते हैं। पाड़े, बकरे काटने, बली चढ़ाने और मांस-भक्षण में सुख ढूँढ़ते हैं।''**

पूज्य बापूजी ने बली-प्रथा पर असंतोष व्यक्त करते हुए कहा कि **''नवरात्रि पर बकरे-पाड़े नहीं काटने चाहिए। जिस जीव की हत्या की जाती है, वह मरने से पहले छटपटाता है, भयभीत होता है, प्रतिशोध व्यक्त करता है, उसे क्रोध आता है। ऐसे जीव का मांस खाने से खानेवाले में आसुरी गुण आ जाते हैं। बली देनी ही हो तो अपने अहंकार की बली दो, अपने दुर्गुणों की बली दो। नवरात्रि व्रत-उपवास-आराधना का पर्व है, इसमें पशुबली त्याज्य है।''**

सत्संग के अभाव को सभी बुराइयों की जड़ बताते हुए पूज्यश्री ने जैसलमेर में सत्संग-स्थल व आश्रम निर्माण के लिए १ लाख ८ हजार रु. देने की घोषणा की।

बाड़मेर (राज.) : ४ अक्टूबर की शाम से ही बाड़मेर (राज.) में सत्संग प्रारंभ हुआ। ५ अक्टूबर को विजयादशमी के विजय पर्व पर सबको बधाई देते हुए योगनिष्ठ पूज्य बापूजी ने कहा : **''जो व्यक्ति शरीर को 'मैं' और संसार को 'मेरा' मानकर सुखी होने के लिए अपनी सारी शक्तियाँ खर्च कर देता है, वह रावण के रास्ते है तथा अपने आत्मा को 'मैं' और व्यापक ब्रह्म को 'मेरा' मान प्राणिमात्र के हित में लगकर जो चित्त की विश्रांति पाता है, वह राम के रास्ते है।**

चिंतन की धारा भिन्न होने के कारण परिणाम भिन्न है। राम का तो पूजन किया जाता है और रावण को हर वर्ष जलाया जाता है, क्योंकि रावण सुख या रस को बाहर खोज रहा था। सत्संग मनुष्य को जीवन के संग्राम में विजय दिला देता है। दैवी संपदा की उपासना राम की उपासना है और वासना के वेग में बह जाना, अहंकार को पोषित करके निर्णय लेना यह आसुरी संपदा की उपासना है, रावण का रास्ता है। अहंकार को विसर्जित करके सबकी भलाई हो ऐसा यत्न करना, यह रामजी का रास्ता है।

आप दस इन्द्रियों में रत रहनेवाले रावण जैसा जीवन न जियें वरन् दसों इन्द्रियों को ठीक कर दशरथनंदन राम के रास्ते लगायें।''

भरतपुर (राज.) : ७ अक्टूबर की शाम को पूज्यश्री के आगमन की सूचना नगर में विद्युत की गति से फैल गयी और सम्पूर्ण नगर में हर्ष की लहर दौड़ गयी। दूसरे दिन ८ अक्टूबर को स्थानीय कंपनी बाग में सत्संग का अयोजन हुआ। टी.वी. पर पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग पानेवाले श्रद्धालुगण उन्हें अपने शहर में प्रत्यक्ष पाकर फूले न समाये।

समिति के सज्जनों व अध्यक्षश्री का त्याग, तपस्या और दानशीलता ऐसी रही कि सारा भारत तो हृदयपूर्वक उनकी सराहना करे ही लेकिन भगवतपुर में भी ऐसे लोगों की ७ पीढ़ियाँ तर जाती हैं।

ग्वालियर (म.प्र.) : शरद पूर्णिमा के शुभ अवसर पर ग्वालियर में १० से १२ अक्टूबर तक ३ दिवसीय सत्संग-कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। आजकल कुंभ-सी विशाल भीड़ पूज्य बापूजी के सत्संग का पर्याय बन चुकी है। इन तीन दिनों में ऐसा लगा मानों, शहर का हर मार्ग मेला ग्राउण्ड की ओर मुड़ गया हो। देश के तमाम हिस्सों से पूनम व्रतधारी भक्तों का आगमन यहाँ हुआ। हृदयपूर्वक हास्य, आत्मशांति, संतुष्टिप्रदायक मधुर मुस्कान-प्रेमभरी चितवन श्रोताओं के मुखमंडल पर देखते ही बनती थी।

पहले दिन के पहले सत्र में ही मेला ग्राउण्ड का विशाल सत्संग-पंडाल छोटा साबित हो गया। शाम के सत्र में बैठक व्यवस्था और बढ़ायी गयी लेकिन फिर से इतना जनसैलाब उमड़ा कि पंडाल फिर छोटा पड़ गया। पूज्य बापूजी को आखिर कहना पड़ा कि 'पंडालवाले हारे और आप लोग जीते।'

शरद पूर्णिमा के अवसर पर चन्द्रमा की चाँदनी में पुष्ट की हुई खीर सभी भक्तों को खिलायी गयी। दमे के ८०० रोगियों को विशेष औषधि मिलाकर विशेष विधि से तैयार की गयी खीर दी गयी, जिसके विधिवत् सेवन से दमा जड़सहित नष्ट हो जाता है।

पूज्य बापूजी की अमृतवर्षी स्वरों पर सवार अध्यात्म की अमृतवर्षा की फुहारों से सत्संग-स्थल पर उपस्थित श्रद्धालु सराबोर हो उठे । अपनी सूत्रात्मक वाणी में पूज्यश्री ने कहा : **''सभी मनुष्य केवल दो चीजें चाहते हैं। उन दो चीजों को जुटाने के लिए उन्हें जो कुछ करना पड़े वह सब करते हैं। एक तो चाहते हैं आनंद, दूसरा चाहते हैं शांति। सुबह से शाम तक, जीवन से मौत तक, जन्म से जन्मांतर तक इन दो चीजों के लिए ही सारे ब्रह्माण्डीय जीव घूम रहे हैं। जिसने रस (आनंद) और शांति में जितनी स्थिति की, वह उतना ही बड़ा हो गया।**

यदि आपको स्थायी रस और शांति चाहिए तो आपके जीवन में व्रत होना चाहिए। पूनम व्रतधारियों को दुःख की चोट उतनी नहीं लगती जितनी साधारण व्यक्ति को लगती है। वे सुख में उतने लालायित नहीं होते, जितने साधारण व्यक्ति होते हैं।

जीवन में कोई व्रत होने से सुख के लालच और दुःख के भय से चित्त कमजोर नहीं होगा। फिर वह असली रस और असली शांति में टिकने लगेगा।''

दतिया (म.प्र.) : ग्वालियर से झाँसी जाते हुए रास्ते में पड़नेवाला दतिया जैसा छोटा शहर भी सत्संग की बहती गंगा में हाथ धोने से नहीं चूका। १४ अक्टूबर की शाम का एक सत्र उनके नाम हुआ।

झाँसी (उ.प्र.) : १६ व १७ अक्टूबर को धारा १४४ के चलते भी झाँसी के प्रदर्शनी मैदान में सत्संग-प्रेमियों की विशाल जनमेदनी उमड़ पड़ी। धारा १४४ के तहत इतने लोग पकड़े गये कि जेल तो भर गये लेकिन स्कूलों और कॉलेजों को भी अस्थायी जेल बनाया गया। लेकिन सत्संग में आनेवालों के लिए वह धारा किनारे ही रह जाती थी। कायदे की धारा के दिनों में ही सत्संग-धारा सफल हो गयी।

६ से ८ दिसम्बर १९९२ के कालखंड में भी देशभर में धारा १४४ लागू हो गयी थी। उन दिनों में एक तरफ पूज्य बापूजी का सत्संग चल रहा था तो दूसरी तरफ कर्फ्यु। जब कर्फ्यु में भी सत्संग सम्पन्न हो सकता है तो धारा १४४ में सत्संग सम्पन्न हो जाय यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। यह तो स्वाभाविक ही था।

कोई सोच भी नहीं सकता था कि जेल भी भर गये, स्कूल, कॉलेज भी अस्थायी जेल के रूप में भर गये और यहाँ इतना विशाल जनसैलाब !

भगवन्नाम-महिमा पर प्रकाश डालते हुए पूज्यश्री ने कहा : **''भगवान भी भगवान के नाम की महिमा नहीं गा सकते। भगवन्नाम से अनगिनत फायदे होते हैं। हृदय पवित्र होता है, पाँचों शरीरों एवं चौरासी नाड़ियों की शुद्धि होती है। भगवन्नाम से भगवद्ज्ञान और भगवद्रस आने लगता है, भगवत्कृपा आने लगती है। भगवन्नाम से क्या नहीं आता, यह सवाल है।**

नाम प्रसाद संभु अबिनासी। साजु अमंगल मंगल रासी॥
सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी। नाम प्रसाद ब्रह्मसुख भोगी॥
नारद जानेउ नाम प्रतापू। जग प्रिय हरि हरि हर प्रिय आपू॥
नामु जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भगत सिरोमनि भे प्रहलादू॥
ध्रुवँ सगलानि जपेउ हरि नाऊँ। पायउ अचल अनूपम ठाऊँ॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू॥
अपतु अजामिलु गजु गनिकाऊ। भए मुकुत हरि नाम प्रभाऊ॥
कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई। रामु न सकहिं नाम गुन गाई॥

(श्रीरामचरित, बा.का. : २५.१-४)

हम उसकी महिमा कितनी गायें ?

आप वाचिक जप करते-करते मानसिक जप में और फिर उपांशु जप में आ जाओ। ॐ... ॐ... ॐ... हरये नमः, ॐ श्री परमात्मने नमः, ॐ नमो नारायणाय, ॐ नमो भगवते वासुदेवाय - सभी हृदयों को पावन करनेवाले इन जीवनोद्धारक नाम भगवान में आ जाओ। पुण्यात्मा के लिए यह सरल-से-सरल काम है और पापी के लिए कठिन-से-कठिन काम है।''

कलिजुग केवल हरि गुन गाहा।
गावत नर पावहिं भव थाहा॥

(कृपया आप आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'भगवन्नाम जप-महिमा' पढ़िये-पढ़ाइये, जप करिये-कराइये। भगवन्नाम-कीर्तन करने-कराने के इस सेवाकार्य को, सत्प्रवृत्ति को अपने-अपने क्षेत्र में बढ़ावा देने के लिए आप आश्रम की तरफ से आर्थिक सहयोग मँगवा सकते हैं।)

रसमय जीवन सबकी माँग है और इसकी पूर्ति होती है पूज्य बापूजी के सत्संग में आने से। कभी हास्य रस, कभी गांभीर्य रस तो कभी शांत रस को माध्यम बनाकर सद्ज्ञान की बूटी घोंट-घोंटकर पिलायी जाती है। इसका लाभ लेते झाँसी (उ.प्र.) के सत्संगी।

नयी चेतना, नयी उमंग... नयी प्रेरणा, नया उल्लास... यह एहसास हो रहा है उदयपुर (राज.) के इन विद्यार्थियों को।

पूज्यश्री के सत्संग-अमृत का पान करते हुए उदयपुर (राज.) के भक्तजन।

...L REGISTRATION. NO. GUJ-1132. LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENSE NO. 207. POSTING FROM AHMEDABAD 2-15 OF EVERY MONTH. ❊ BYCULLA STG. WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO. 236. REGD NO. TECH/47 833/MBI/2003-05
...OM MUMBAI 9 & 10th OF EVERY MONTH. ❊ FOREIGN POSTING 5 & 6 OF EVERY MONTH FROM AIRPORT PO. - 400099. ❊ DELHI REGD. NO. DL-11513/2003 WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO.-U(C) 232/2003 POSTING FROM DELHI 10-11 OF EVERY MONTH.

गालव ऋषि की तपोभूमि ग्वालियर (म.प्र.) में पूज्यश्री के सत्संग-अमृत से परितृप्त भक्तजन अपने प्यारे सद्गुरुदेव की आरती उतारकर हृदय पावन करते हुए।

जोधपुर (राज.)

ध्यान, कीर्तन, सत्संग-श्रवण... जीवन-विकास के विविध पहलुओं का लाभ ले रहे विद्यार्थी।

बालक वृद्ध और नरनारी, सभी प्रेरणा पायें भारी। 'श्री आसारामायण' की इन पंक्तियों की सत्यता का प्रत्यक्ष प्रमाण है यह जनसैलाब।